शिक्षा का अधिकार
सर्व शिक्षा अभियान
सब पढ़ें सब बढ़ें

बी०टी०सी० तृतीय सेमेस्टर

सैद्धान्तिक विषय – 06

समावेशी शिक्षा एवं विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा, निर्देशन एवं परामर्श

तस्मात् उत्तिष्ठ कौन्तेय
राज्य शिक्षा संस्थान, उत्तर प्रदेश, प्रयाग

राज्य शिक्षा संस्थान,
उ०प्र०, इलाहाबाद

www.dietmathura.org

Downloaded From www.dietmathura.org

बी0टी0सी0 तृतीय सेमेस्टर

मुख्य संरक्षक : **श्री एच0एल0गुप्ता,** आई.ए.एस., सचिव, बेसिक शिक्षा, उ0प्र0, शासन, लखनऊ

संरक्षक : **श्रीमती शीतल वर्मा,** आई.ए.एस. राज्य परियोजना निदेशक, सर्व शिक्षा अभियान, लखनऊ

निर्देशन : **श्री सर्वेन्द्र विक्रम बहादुर सिंह, निदेशक,** राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0

समन्वयन : **श्री दिब्यकान्त शुक्ल, प्राचार्य,** राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद

परामर्श : **श्री अजय कुमार सिंह, संयुक्त निदेशक,** (एस0एस0ए0) राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, उ0प्र0, लखनऊ

लेखक : श्रीमती सुषमा यादव, शोध प्राध्यापक, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद, डॉ0 संध्या सिंह, शोध प्राध्यापक, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद, श्रीमती यशस्विनी भट्ट, प्रवक्ता, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद, श्रीमती डॉ0 संध्या सिंह प्रवक्ता, राज्य शिक्षा संस्थान, उ0प्र0, इलाहाबाद ।

कम्प्यूटर कम्पोजिंग : राजेश कुमार यादव

www.dietmathura.org

Downloaded From www.dietmathura.org

समावेशी शिक्षा एवं विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा, निर्देशन एवं परामर्श

कक्षा शिक्षण : विषयवस्तु

खण्ड अ– विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे

❖ शैक्षिक समावेशन से अभिप्राय, पहचान, प्रकार, निराकरण। यथाः अपवंचित वर्ग, भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र, वर्ण, लिंग, शारीरिक दक्षता (दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित एवं वाक्/अस्थिबाधित), मानसिक दक्षता।

❖ समावेशन के लिए आवश्यक उपकरण, सामग्री, विधियाँ, टी0एल0एम0 एवं अभिवृत्तियाँ

❖ समावेशित बच्चों का अधिगम जाँचने हेतु आवश्यक टूल्स एवं तकनीकी

❖ समावेशित बच्चों के लिए विशेष शिक्षण विधियाँ। यथा–ब्रेललिपि आदि।

खण्ड ब– निर्देशन एवं परामर्श

❖ समावेशी बच्चों हेतु निर्देशन एवं परामर्श– अर्थ, उद्देश्य, प्रकार, विधियाँ, आवश्यकता एवं क्षेत्र

❖ परामर्श में सहयोग देने वाले विभाग/संस्थाएँ

- मनोविज्ञानशाला उ0प्र0, इलाहाबाद
- मण्डलीय मनोविज्ञान केन्द्र (मण्डल स्तर पर)
- जिला चिकित्सालय
- जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान में प्रशिक्षत डायट मेण्टर
- पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण तन्त्र
- समुदाय एवं विद्यालय की सहयोगी समितियाँ
- सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन

❖ बाल–अधिगम में निर्देशन एवं परामर्श का महत्व

Downloaded From www.dietmathura.org

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा, समावेशी शिक्षा निर्देशन एवं परामर्श

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों से अभिप्राय

सामान्य रूप से जो बच्चे औसत शारीरिक एवं मानसिक स्तर IQ 90–110 वाले होते हैं, उन्हें हम सामान्य बच्चे के रूप में जानते हैं। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य बच्चों से किस प्रकार विशिष्ट होते हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि सामान्य बच्चे सामान्य शारीरिक एवं मानसिक श्रम वाले कार्यों को करने में किसी बाधा का अनुभव नहीं करते हैं। कक्षा में अधिकांश बच्चों की भाँति वे शैक्षिक उपलब्धि में भी औसत होते हैं। इनके सीखने की गति भी औसत होती है। इसके विपरीत विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे इस प्रकार के कार्यों को करने में अपने को असहज एवं असमर्थ पाते हैं।

प्रमुख शिक्षण बिन्दु

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे

- अभिप्राय
- पहचान या लक्षण
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के प्रकार

प्रशिक्षु चर्चा करें

- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों से क्या अभिप्राय है?

चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि विशिष्टता के क्षेत्र सार्वभौमिक हैं। महान कवि सूरदास जन्मान्ध थे। प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्सटीन का भाषा विकास काफी देर से हुआ। अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट स्वयं पोलियोग्रस्त थे। यह विशिष्टता, वंशानुगत, कभी–कभी वातावरणजन्य तथा कभी–कभी दोनों का संयोजन होती है। यह सभी उदाहरण सिद्ध करते हैं कि विभिन्न नियोग्यताओं की पूर्ति सम्भव है तथा कोई भी अक्षम बच्चे को उचित शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा सामान्य बच्चों की तरह स्वयं के लिए तथा राष्ट्र एवं समाज के लिए उपयोगी बनाया जा सकता है। आज प्रायः विश्व के सभी देशों में विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति दृष्टिकोण में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ है। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के सम्बन्ध में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षाशास्त्रियों नें अपने–अपने ढंग से व्याख्या की है, यथा–

1. हीबर्ड (1996) के अनुसार,– ''विशिष्ट बच्चों की श्रेणी में वे बच्चे आते हैं जिन्हें सीखने में कठिनाई का अनुभव होता है या जिनमें मानसिक या शैक्षिक निष्पादन या सृजन अत्यन्त उच्चकोटि का होता है या जिनको व्यावहारिक, सांवेगिक एवं सामाजिक समस्याएँ घेर लेती हैं या वे विभिन्न शारीरिक अपंगताओं या निर्बलताओं से पीड़ित रहते हैं, जिनके कारण ही उनके लिए अलग से विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था करनी पड़ती है।''

Downloaded From www.dietmathura.org

2. क्रो एण्ड क्रो के अनुसार, ''विशिष्ट प्रकार या विशिष्ट पद किसी गुण या उन गुणों से युक्त व्यक्ति पर लागू होता है जिसके कारण वह व्यक्ति, साथियों का ध्यान अपनी ओर विशिष्ट रूप से आकर्षित करता है तथा इससे उसके व्यवहार की अनुक्रिया भी प्रभावित होती है।''

3. क्रिक (1962) के अनुसार, ''विशिष्ट बच्चे मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक गुणों में सामान्य बच्चों से भिन्न होते हैं। उनका भिन्नता कुछ ऐसी सीमा तक होता है कि उसे स्कूल के सामान्य कार्यों में विशिष्ट शिक्षा सेवाओं में परिवर्तन की आवश्यकता होती है। ऐसे बच्चों के लिए कुछ अतिरिक्त अनुदेशन भी चाहिए, ऐसी दशा में उनका सामान्य बच्चों की अपेक्षा अधिक विकास हो सकता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओ के आधार पर हम कह सकते हैं कि, ''विशिष्ट बच्चे वह बच्चे है जो कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बच्चे से उस सीमा तक स्पष्ट रूप से विचलित या अलग होता है जहाँ कि उसे अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण–विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है, उन्हें विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे कहा जाता है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मन्दबुद्धि, शैक्षिक रूप से श्रेष्ठ एवं पिछड़े, बाल–अपराधी, असमायोजित, समस्याग्रस्त, सांवेगिक, अस्थिरतायुक्त आदि प्रकार के बच्चे सम्मिलित हैं। हेवेट तथा फोरनेस के अनुसार, 'विशिष्ट' ऐसा व्यक्ति है जिसकी शारीरिक, मानसिक, बुद्धि, इन्द्रियाँ, मांसपेशियों की क्षमताएँ अनोखी हो अर्थात सामान्यतया ऐसे गुण दुर्लभ हों, ऐसी अनोखी दुर्लभ क्षमताएँ उसकी प्रकृति तथा कार्यों के स्तर में भी हो सकती है।

इस प्रकार से विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों से सम्बन्धित सभी प्रश्नों के समाधान के लिए मनौवैज्ञानिक, चिकित्साशास्त्री, समाजशास्त्री, शिक्षाविद, गृहविज्ञान वेत्ता आदि अपने–अपने दृष्टिकोणो के अनुसार अध्ययनरत हैं। वैयक्तिक भिन्नताओं के ज्ञान के साथ–साथ इन प्रश्नों का महत्व और अधिक हो गया है। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि सभी व्यक्ति प्रायः शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक एवं सामाजिक रूप से किसी न किसी रूप में परस्पर भिन्न होते हैं, किन्तु कभी–कभी भिन्नताएँ इस सीमा तक पायी जाती हैं कि बच्चों को विशिष्ट वर्गों में रखकर शिक्षा देना आवश्यक हो जाता है। भारत जैसे प्रजातान्त्रिक प्रणाली वाले राष्ट्र में सरकार, समाज तथा शिक्षा संस्थाओं का यह कर्त्यव्य है कि वे इन विशिष्ट बच्चों की पहचान कर उनकी आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा एवं निर्देशन प्रदान करें।

पुनरावृत्ति बिन्दु– प्रशिक्षु निम्नलिखित बिन्दुओं से पुनरावृत्ति कराएं–

- सामान्य बच्चे 90–110 IQ वाले बच्चे होते हैं। ये शारीरिक एवं मानसिक रूप से भी सामान्य होते हैं।
- जो बच्चे सामान्य बच्चों से अलग होते हैं वे विशिष्ट बच्चे कहलाते हैं।
- विशिष्ट बच्चे के लिए विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था करनी पड़ती है।
- विशिष्ट बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा को समझने में सामान्य शिक्षकों को कठिनाइयाँ होती हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

- विशिष्ट बच्चों के अन्तर्गत– शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मन्दबुद्धि, शैक्षिक रूप से श्रेष्ठ, पिछड़े बच्चे, बाल अपराधी, असमायोजित, समस्याग्रस्त, सांवेगिक, अस्थिरतायुक्त आदि प्रकार के बच्चे सम्मिलित हैं।

विशिष्ट बच्चों की पहचान एवं प्रकार

प्रशिक्षु चर्चा कर स्पष्ट करें कि समाज में बहुत प्रकार के व्यक्तित्व के लोग पाये जाते हैं। कुछ सामाजिक होते हैं, कुछ अन्तर्मुखी होती हैं तो कुछ असामाजिक होते हैं, इसी तरह से बच्चों में विभिन्न प्रकार की वैयक्तिक भिन्नताएँ पायी जाती हैं, कुछ प्रखर बुद्धि के होते हैं तो कुछ मन्दबुद्धि के होते हैं तो कुछ में कार्यों को सीखने की प्रवृत्ति नहीं पायी जाती है, जो बच्चे सामान्य बच्चों की तरह कार्यों को करने में सक्षम नहीं होते हैं। वे विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चे होते हैं। वह बच्चे सामान्य बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा से लाभान्वित नहीं हो सकता। उसे सामान्य बच्चों के साथ ही शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती हैं जिसके कारण उनके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता है। अतः अध्यापक और समाज का यह नैतिक दायित्व है कि वह विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान सुनिश्चित कर उन्हें उनकी आवश्यकता एवं सामर्थ्य के अनुसार शिक्षा की व्यवस्था करें। आइए, अब हम जानते हैं कि विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान कैसे करेंगे ?

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान या लक्षण

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य बच्चों से विशिष्ट लक्षणों वाले होते हैं। सामान्य बच्चों में पाये जाने वाली निम्नलिखित विशिष्ट प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं– यह अन्तर्मुखी, निराशावादी, सांवेगिक, स्थिर, शर्मीले, निष्क्रिय, आत्मकेन्द्रित, चिन्ताग्रस्त, निर्भर प्रवृत्ति, कभी–कभी उग्र, एकाकी भावना वाले होते हैं। इनकी पहचान हम निम्नलिखित तरीके से कर सकते हैं –

1. **निरीक्षण द्वारा–**अध्यापक अपने कक्षा–कक्ष में शिक्षण के दौरान उपरोक्त लक्षणों के आधार पर विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को चिन्हित कर सकता है और उन्हें आवश्यकतानुसार शिक्षा प्रक्रिया से लाभान्वित कर सकता है।
2. **चिकित्सकीय परीक्षण द्वारा–** कभी–कभी ऐसा होता है कि विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान न होने के कारण विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के शरीर एवं मस्तिष्क का चिकित्सकीय परीक्षण कर उनकी पहचान की जा सकती हैं।
3. **मानसिक परीक्षण द्वारा–** छात्रों का मानसिक परीक्षण कर उनकी विशिष्टता का पता लगाया जा सकता है। यह थिमेंटिक अपरसेप्सन टेस्ट (TAT), हरमन रोशा का स्याही धब्बा परीक्षण आदि जैसे परीक्षणों का प्रयोग कर पता लगाया जा सकता है।
4. **शैक्षिक परिणामों के द्वारा–**विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे के कक्षा के परीक्षा में प्राप्त परिणामों का अवलोकन एवं विश्लेषण के द्वारा इनकी विशिष्टता का पता लगाया जा सकता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

5. **व्यवहार के अवलोकन के द्वारा–** विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों द्वारा किये गये व्यवहारों के मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं विश्लेषण से उनकी विशिष्टताओं का पता लगाया जा सकता है।

6. **समाजमिति एवं साक्षात्कार के द्वारा–** विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान के लिए समाजमिति एवं उनका प्रत्यक्ष विधि से साक्षात्कार कर उनकी विशिष्टताओं का पता लगाया जा सकता है।

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के प्रकार

सामान्य बच्चों से भिन्नता रखने वाले विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे आपस में भी अनेक असमानताएँ रखते हैं। कुछ बच्चे सीखने की निर्योग्यताओं के कारण, कुछ बौद्धिक क्षमताओं के कारण तथा कुछ असामान्य शैक्षिक उपलब्धि के कारण विशिष्ट आवश्यकता वाले होते हैं। सामान्यतः हमें विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे को निम्नलिखित प्रकार से विभक्त कर सकते हैं :–

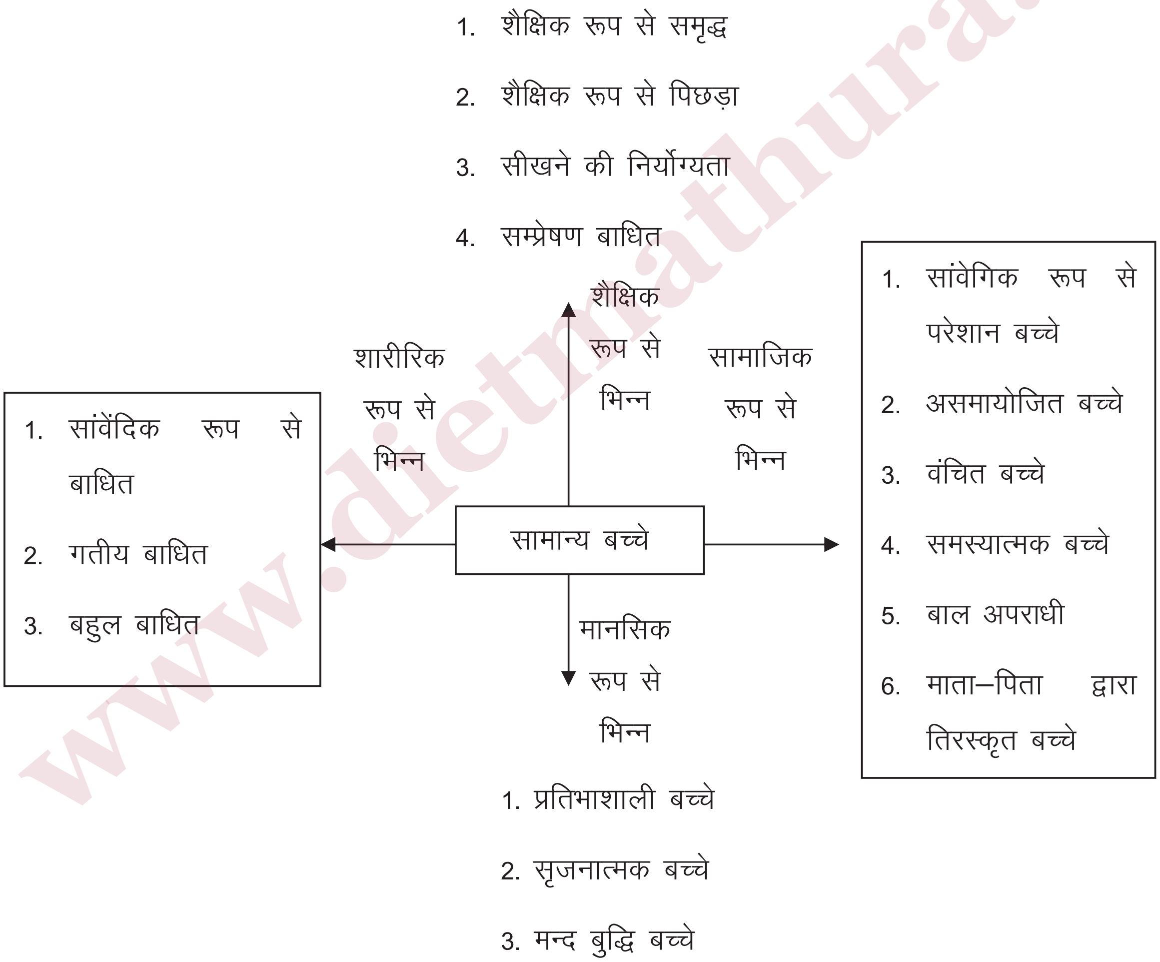

www.dietmathura.org

Downloaded From www.dietmathura.org

प्रशिक्षु निम्नलिखित बिन्दुओं से पुनरावृत्ति कराएं–

- विशिष्ट बच्चों के लक्षण, गुण, स्वरूप सामान्य बच्चों से विशिष्ट होते हैं।
- यह उन बच्चों पर लागू होता है जो सामान्य बच्चों से अलग हो, उनकी स्मरण शक्ति अलग हो।
- एक विशिष्ट बच्चे शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक आधार पर सामान्य बच्चे से बिल्कुल अलग प्रकार का होता है।
- विशिष्ट बच्चे सामान्य कक्षा–कक्ष एवं सामान्य शिक्षा कार्यक्रमों से पूर्णतया लाभान्वित नहीं हो पाता।
- विशिष्ट बच्चे की अधिकतम सामर्थ्य विकास के लिए इसे स्कूल की कार्यप्रणाली तथा उसके साथ किये जाने वाले व्यवहार में परिवर्तन की आवश्यकता होती है।
- विशिष्ट बच्चे शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक तथा शैक्षिक उपलब्धियों जैसी सभी धाराओं में सम्मिलित होता है।

प्रतिभाशाली बच्चे (GIFTED CHILDREN)

प्रशिक्षु चर्चा करें– प्रतिभाशाली बच्चे किन्हें कहते हैं?

चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि हम जानते हैं कि जो बच्चे सामान्य बच्चों से किसी भी प्रकार से अलग होते हैं, वे विशिष्ट बच्चों की श्रेणी में आते हैं। विशिष्ट बच्चे आपस में भी कई उपश्रेणियों में विभक्त होते हैं, जैसे, मानसिक मन्दित, समस्यात्मक, पिछड़े, चलन–बाधित, प्रतिभाशाली आदि।

आइए, प्रतिभाशाली बच्चे (Gifted Children) के बारे में जानें –

(1) **अब्दुल रउफ के अनुसार–** ''प्रायः उच्च बुद्धिलब्धि को प्रतिभाशाली का संकेत माना जाता है। अतः 'प्रतिभाशाली बच्चे' शब्द का अभिप्राय बच्चे की उच्च बुद्धिलब्धि से किया जाता है।"

"The term gifted child has been commonly taken to mean child with a high I.Q.

(2) **कालसनिक के अनुसार–** ''वह प्रत्येक बच्चे जो अपने आयु स्तर के बच्चो मे किसी योग्यता में अधिक हो और जो हमारे समाज के लिए महत्वपूर्ण नया योगदान कर सके।

"The term gifted has been applied to every child who, in his age group, is superior in same ability which may make him on outstanding cotributor the welfare and quality of living in our society."

(3) **प्रेम पसरीचा के अनुसार**, ''जो सामान्य बुद्धि से श्रेष्ठ प्रतीत हो या उन क्षेत्रों मे जितना अधिक बुद्धिलब्धि से सम्बन्धित होना जरूरी नहीं, अतिविशिष्ट योग्यताएँ रखता हो।''

Downloaded From www.dietmathura.org

"The gifted child is the one who exhibits superiority in inteligence or the one who is in possession of special ability of high order in the field which are not necessarily associated with high inteligence quitient."

इस प्रकार से उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन से यह बात सर्वमान्य प्रतीत होती है कि प्रतिभाशाली बच्चे सामान्य बच्चों की अपेक्षा श्रेष्ठ एवं उच्च बुद्धिलब्धि वाले होते हैं। यहाँ पर यह प्रश्न विचारणीय है कि उनकी बुद्धिलब्धि कितनी होनी चाहिए, कि इन बच्चों को प्रतिभाशाली बच्चे माना जाय। कुछ विद्वान इन्हें 135 तो कुछ 140 से ऊपर बुद्धिलब्धि वाले बच्चों को 'प्रतिभाशाली' मानते हैं। 'टरमन के अनुसार, '140 बुद्धिलब्धि से ऊपर वाले बच्चे प्रतिभाशाली या प्रतिभावान माने जा सकते हैं।

प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान

प्रत्येक स्कूल में विभिन्न प्रकार के बच्चे होते हैं। उनमें व्यक्तिगत विभिन्नताएँ भी अधिक देखने को मिलती हैं। इन व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान करना एक अध्यापक के लिए कठिन कार्य है। प्रशिक्षु निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग कर वह प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान कर सकता है–

(1) **बुद्धि परीक्षाएँ– (Intelligence Tests)** – प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान के लिए अध्यापक कक्षा–कक्षा में बुद्धि–परीक्षणों का प्रयोग कर सकता है यह परीक्षण शाब्दिक एवं अशाब्दिक दोनों प्रकारों का हो सकता है।

(2) **प्रवणता परीक्षा (Aptitude Tests)** – अध्यापक प्रवणता परीक्षा के द्वारा बच्चों के सम्मान एवं भविष्य के उन्नति के बारे में अनुमान लगा सकते हैं, इसके लिए अध्यापक को प्रशिक्षित होना चाहिए।

(3) **सम्बन्धित व्यक्तियों से एकत्र सूचना (Information from related persons)** – जो व्यक्ति बच्चे से सम्बन्धित हो (चाहे परिवार का हो या पड़ोस या विद्यालय का) वे बच्चों के सम्बन्ध में सूचनाएँ एकत्रकर या 'प्रतिभा खोज परीक्षाओं (N.T.S.) का आयोजन कर प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान कर सकता है।

(4) **उपलब्धि परीक्षण (Achievment Tests)** – अध्यापक प्रतिभाशाली छात्रों की पहचान उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग कर पता लगा सकते हैं।

(5) **बच्चों के गुणों के आधार विशेषताएँ** – डी होन एवं कफ (De Hoon And Cough) ने प्रतिभाशाली बच्चों के गुणों की एक सूची तैयार की है। जिसके आधार पर अध्यापक ऐसे बच्चों की पहचान कर सकते हैं, यह सूची निम्नलिखित प्रकार से है–

(अ) प्रतिभाशाली बच्चे सुगमता से याद कर लेते हैं।

(ब) ये बच्चे सामान्य बुद्धि का प्रयोग अधिक करते हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

(स) ये बच्चे रटने की बजाय समझने में विश्वास करते हैं।

(द) इनका शब्द भण्डार विस्तृत होता है।

(य) प्रतिभाशाली बच्चे कठिन कार्यों को सुगमता पूर्वक कर लेते हैं।

(र) इनका चिन्तन मौलिक होता है।

(ल) प्रतिभाशाली बच्चे स्पष्ट रूप से सोचने, अर्थों को पहचानने और सम्बन्धों को पहचानने में दक्ष होते हैं।

(व) इनकी ज्ञानेन्द्रियों का विकास तीव्र गति से होता है।

(श) ये अमूर्त चिन्तन एवं अमूर्त विषयों में अधिक रूचि लेते हैं।

(ष) इनमें सृजनशीलता का गुण पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त प्रतिभाशाली बच्चों में शीघ्र समस्या समाधान, विद्यालयी कार्य एवं गृहकार्य को सुगमता से करना, अन्तर्दृष्टि, बौद्धिक नेतृत्व, अधिक अंक पाने की प्रवृत्ति, एवं क्रियाकलापों में विभिन्नताओं के गुण पाये जाते हैं।

प्रतिभाशाली बच्चे की शिक्षा

प्रतिभाशाली बच्चे को किस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए ? इसका उत्तर देते हुए, 'हैविग हर्स्ट' ने अपनी पुस्तक, "A Surey of The Education gifted children " में लिखा है कि, ''प्रतिभाशाली बच्चों के लिए शिक्षा का सफल कार्यक्रम वही हो सकता है, जिसका उद्‌देश्य उनकी विभिन्न योग्यताओं का विकास करना हो।'' इस कथन के अनुसार प्रतिभाशाली बच्चों की शिक्षा का कार्यक्रम इस प्रकार होना चाहिए–

- प्रतिभाशाली बच्चों के लिए अवसरों की समानता।
- विशेष एवं समृद्ध पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शिक्षा।
- असामाजिक आदतों को रोकना।
- सर्वांगीण विकास पर बल।
- संस्कृति की शिक्षा।
- सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा।
- पाठ्य–सहगामी क्रियाओं का आयोजन करना।
- सामाजिक अनुभवों के अवसर देना।
- नेतृत्व का प्रशिक्षण देना।
- शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करना।

Downloaded From www.dietmathura.org

- प्रोत्साहन प्रदान करना।
- श्रेष्ठ एवं विशेष रूप से प्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा शिक्षण।
- बच्चे की रूचि के अनुसार प्रिय कार्य देना।
- पुस्तकालय सुविधाएँ उपलब्ध कराना।
- योजना विधि द्वारा शिक्षण।
- विशेष विद्यालयों में शिक्षा।
- विशेष कक्षाओं की व्यवस्था।
- शिक्षक द्वारा व्यक्तिगत ध्यान देना।
- शिक्षा का आधार बच्चे का अध्ययन।
- समय–समय पर विशेष निर्देशन/ परामर्श प्रदान करना।

धीमीगति से सीखने वाले बच्चे (SLOW LEARNING CHILDREN)

प्रशिक्षु चर्चा करें–"धीमी गति से सीखनें वाले बच्चे" कौन से होते हैं?

चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक 'क्रिक' (1962) नें सामान्य एवं प्रतिभाशाली बच्चों की पहचान उनके द्वारा सीखे गये कार्यों को सीखने की गति के आधार पर की। इन्होंने शैक्षिक सफलता एवं शैक्षिक निष्पत्ति को भी आधार माना और कहा यदि सामान्य बच्चे की शैक्षिक उपलब्धि अपने आयु वर्ग से कम है तब उसे भी धीमी गति से सीखने वाला माना जाए। इसके अतिरिक्त यदि बच्चे का विकास, समायोजन, आत्मनिर्भरता अपनी आयु वर्ग के बच्चों के कम है तब भी इन्हें मन्द अधिगामी या धीमे गति से सीखने वाले बच्चे कहा जा सकता है। यदि बच्चे सामान्य कक्षा–कक्ष में अपने आप को समायोजित नहीं कर पाता है तो ऐसे बच्चों को धीमी गति से सीखने वाला बच्चा कहा जाता है। इसमें वे बच्चे भी सम्मिलित होते हैं जिनके सीखने की गति धीमी हो और योग्यता भी सीमित हो।

धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की विशेषताएँ

धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की निम्नलिखित विशेषताएं होती है–

1. **शारीरिक विशेषताएँ** (Physical characteristics)– धीमी गति से सीखने वाले बच्चे होते हैं–(अ) मानसिक (ब) शारीरिक (स) मिश्रित (शारीरिक एवं मानसिक दोनों) इन तीनों प्रकार के विशेषताओं वाले बच्चों का शारीरिक तथा मानसिक विकास धीमी गति से होता है। इनमें परिपक्वता भी देर से आती है। ये साफ कपड़े नहीं पहनते हैं। ऐसे बच्चे लिखना, कला, आत्म विश्वास एवं सामाजिक गुणों का लोप, चिन्तामुक्त, विद्यालय में अनुपस्थित, इन्द्रियदोषों से ग्रसित एवं सीखने में ह्रास जैसी बीमारी से ग्रस्त होते हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

2. **अवधारण शक्ति का अभाव (Weakness of Attention)**– धीमी गति से सीखने वाले बच्चों में स्मरण शक्ति की कमी के कारण धारणशक्ति का अभाव होता है। यह बच्चे पढ़ाई, लिखाई से कतराते (बचते) हैं। यह शब्दों को ध्यानपूर्वक पढ़ते हैं परन्तु उनमें सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाते हैं। शिक्षक द्वारा की गई प्रस्तुतीकरण का ये प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पातें हैं क्योंकि प्रस्तुतीकरण इनके अनुकूल नहीं होता है।

3. **असुरक्षा का भाव–** धीमी गति से सीखने वाले बच्चों में असुरक्षा का भाव अधिक होता है। जिससे उनमे आत्मविश्वास की भावना का अभाव रहता है। यह भाव शारीरिक एवं मानसिक कमजोरी के कारण आ जाता है।

4. **अभिव्यक्ति या सम्प्रेषण क्षमता का अभाव–** धीमी गति से सीखने वाले बच्चों में कल्पना शक्ति कम होती है। साथ ही दूरदर्शिता का भी अभाव होता है। ये अपने विचारों को अभिव्यक्ति नहीं कर पाते हैं। इनमें भविष्य बोध का गुण भी नहीं होता हैं।

5. **समस्याग्रस्ता–** धीमीगति से सीखने वाले बच्चे में सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक समस्यायें पायी जाती हैं। इनकी शैक्षिक उपलब्धि सन्तोषजनक नहीं होती है। इन्हें हतोत्साहित करने से इनमें समाजविरोधी अभिवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की पहचान

प्रशिक्षु यह भी स्पष्ट करें कि धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की पहचान की निम्नलिखित विधियाँ हैं –

1. **निरीक्षण प्रविधि–** विद्यालय में प्रवेश के उपरान्त शिक्षक साधारण ढंग या अनौपचारिक तरीके के उनके विभिन्न क्रियाकलापों का अवलोकन कर सकते हैं।

2. **एकल अध्ययन विधि–** इस ऐतिहासिक शोध प्रविधि के अन्तर्गत अध्यापक द्वारा बच्चे के जन्म से वर्तमान तक की विभिन्न सूचनाओं का उसके मित्रों, रिश्तेदारों, परिवारों के माध्यम से सूचना एकत्रित कर उसे विद्यालयों के अभिलेखों का मिलान कर निदान किया जाता है तथा सुधार भी किया जाता हैं।

3. **चिकित्सा परीक्षण–** बच्चों से सम्बन्धित सूचना से उसके शारीरिक बाधिता की जानकारी नहीं हो पाती है। अतएव उसकी चिकित्सकीय जाँच कराकर पता लगाया जा सकता हैं।

4. **शैक्षिक परीक्षण–** धीमी गति से सीखने वाले बच्चों का जब विद्यालय में प्रवेश कराया जाता है तो वह अपनी आयुवर्ग के बच्चों के साथ शिक्षा ग्रहण करने में कठिनाई का अनुभव करता है। यह शैक्षिक परीक्षणों में कम अंक प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त ऐसे बच्चों की वर्तनी, भाषा, बोधगम्यता, आदि भी कम होती है।

5. **व्यक्तित्व परीक्षण–** व्यक्तित्व परीक्षणों से बच्चे के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा सवेगांत्मक गुणों का बोध होता है तथा इनके अचतेन मस्तिक का भी पता चल जाता है क्योंकि अचेतन मस्तिक

Downloaded From **www.dietmathura.org**

उनके व्यवहारों को भी नियन्त्रित करता है। व्यवहारों एवं समायोजन क्षमता की कमी से इनका पता लग जाता है।

6. **बुद्धि परीक्षण–** धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की पहचान के दो मानदण्ड माने जाते हैं। (1) शैक्षिक उपलब्धि (2) मानसिक स्तर। मानसिक स्तर के लिए प्रमाणिक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग करना चाहिए। किसी एक बुद्धि परीक्षण के आधार पर पहचान करना अधिक सार्थक नहीं होगा। इसलिए शाब्दिक बुद्धि परीक्षा, अशाब्दिक बुद्धि परीक्षा तथा क्रियात्मक बुद्धि परीक्षा का उपयोग करने पर अधिक विश्वसनीय बुद्धि स्तर प्राप्त कर इनकी पहचान की जा सकेगी।

7. **अन्य मनोवैज्ञानिक परीक्षण–** मनोवैज्ञानिक परीक्षण कई प्रकार के होते हैं। इनमें लिखना, पढ़ना तथा भाषा के कौशलों का परीक्षण किया जाता है और निदानात्मक परीक्षण भी प्रयुक्त किये जाते हैं। इन परीक्षणों के आधार पर यह पता चलता है कि धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की प्रकृति किस प्रकार है और निदानात्मक परीक्षणों से कारणों का पता चलता है। जिसके आधार पर इनका सुधार किया जाता है।

धीमीगति से सीखने वाले बच्चों के कारण

प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि धीमीगति से सीखने वाले बच्चों के कारण निम्नवत् हो सकते हैं–

- आर्थिक परिस्थिति या गरीबी
- परिवार के सदस्यों का मानसिक स्तर
- संवेगात्मक घटक
- व्यक्तिगत घटक

धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की समस्याएँ

प्रशिक्षु यह भी बताएं कि धीमी गति से सीखने वाले बच्चों की समस्याएं निम्नवत हो सकती हैं–

- ज्ञानात्मक अधिगम समस्याएँ
- भाषा एवं वाणी की समस्याएँ
- श्रवण प्रत्यक्षीकरण की समस्याएँ
- दृष्टि एवं व्यवहारिक समस्याएँ
- सामाजिक एवं संवेगात्मक समस्याएँ

धीमीगति से सीखने वाले बच्चों की शिक्षा

प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि धीमीगीत से सीखने वाले बच्चों की शिक्षा में निम्नवत बिन्दुओं का होना चाहिए–

Downloaded From www.dietmathura.org

- पाठ्यक्रम का लचीलापन
- शिक्षक द्वारा बच्चे का अवलोकन
- प्रगति आलेख तैयार व्यवस्था
- अभिक्रमित अनुदेशन आव्यूह
- अभिप्रेरण प्रदान करना।
- अधिगम के लिए तत्पर करना।
- व्यवहारिक आयाम द्वारा शिक्षा।
- सम्प्रत्यय की संरचना का निर्माण करना।
- कार्यों का स्तरीकरण करना।
- क्रियात्मक विधियों का प्रयोग।
- शिक्षक की भूमिका

__गिलफोर्ड__ तथा __टेन्सले__ (1971) ने मन्द अधिगामी बच्चों के लिए ठोस सुझाव दिये, वे इस प्रकार हैं –

- शिक्षक को ऐसे बच्चों के लिए छोटी कक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए। अनुवर्ग शिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- अध्ययन के लिए बच्चे की पहुँच के अनुरूप व्यापक सुविधाओं का आयोजन करना चाहिए।
- पाठ्यवस्तु के अनुदेशन निर्माण तथा इनकी विशिष्ट आवश्कताओं को ध्यान में रखना चाहिए।
- योग्य एवं प्रतिभावान बच्चों की सहायता लेनी चाहिए जिससे वह इनकी व्यक्तिगत सहायता कर सकें।
- इनको हर संभव स्वतन्त्रता देनी चाहिए।
- इनके सुझावों को मानना चाहिए एवं अनुसरण करना चाहिए।
- कक्षा मे क्रियाशील रखने के लिए कहानी, नाटक आदि का आयोजन करना चाहिए।
- माता–पिता से सहयोग लेने का प्रयास करना चाहिए।
- इनको असफल होने पर भी प्रवेश देना चाहिए।
- पाठ्यवस्तु को छोटे–छोटे खण्डों में प्रस्तुत करना चाहिए।

शैक्षिक रूप से पिछड़े (कमजोर) (BACKWARD CHILDREN)

पिछड़े बच्चों से अभिप्राय–

प्रशिक्षु चर्चा करें कि पिछड़े बच्चों से क्या अभिप्राय है?

Downloaded From www.dietmathura.org

चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि पिछड़े बच्चों से अभिप्राय शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों के रूप में लगाया जाता है पिछड़े बच्चों को परिभाषित करने के लिए बुद्धिलब्धि (IQ) के स्तर को प्रयोग नहीं किया जाता है। बल्कि निष्पत्ति या शैक्षिकलब्धि को आधार माना जाता है।

(1) **बार्टन हार्ट के अनुसार**, ''पिछड़े बच्चे वे होते है जिनकी शैक्षिक उपलब्धिया उस स्तर से निम्न स्तर की जाती है जिनके लिए यह योग्य होते हैं।

(2) **सिरिलबर्ट के अनुसार,** ''पिछड़े बच्चे वह है जिसकी शैक्षिक लब्धि (बुद्धिलब्धि) या शिक्षा अंक 85 से कम हो।''

(3) **टी0के0ए0 मेनन के अनुसार**, ''भारतीय स्थिति में पिछड़े बच्चे वो है जो अपनी कक्षा की औसत आयु से एक से अधिक वर्ष बड़े हो। ''

प्रशिक्षु चर्चा करने के पश्चात् स्पष्ट करें कि उपर्युक्त परिभाषाओं से यह बात स्पष्ट होती है कि पिछड़े बच्चे अपनी शैक्षिक निष्पत्ति में अपने उम्र वर्ग के छात्रों से कम उपलब्धि वाला होता है। यह 85 से कम बुद्धिलब्धि वाला होता है। शैक्षिक रूप से पिछड़ापन दो प्रकार का होता है–

(1) सामान्य पिछड़ापन (2) विशिष्ट पिछड़ापन।

1. **सामान्य पिछड़ापन**– इस प्रकार में बच्चे सभी पक्षों में पिछड़ा दिखाई देता है। वह लगभग कक्षा–कक्ष के सभी विषयों में पिछड़ जाता है। पाठ्यक्रमान्तर क्रियाओं से उसे कोई सफलता नहीं मिलती है या वह उनमें भाग नहीं लेता है।
2. **विशिष्ट पिछड़ापन**– इस प्रकार के पिछड़ेपन में बच्चे किसी एक विशेष विषय या पक्ष में पिछड़ता है। वह सभी विषयों में पिछड़ने के बजाय किसी विशेष विषय में किसी कारणवश वह सामान्य बच्चों के साथ नहीं चल पाता और वह उस विषय में उनकी तुलना में पिछड़ जाता है।

शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों की पहचान

कक्षा कक्ष में इस प्रकार के बच्चों की पहचान के लिए हम निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग कर सकते है –

1. **विभिन्न परिस्थितियों एवं व्यवहार का ज्ञान**– शैक्षिक पिछड़ेपन के वाहय कारणों का पता लगाने के लिए बच्चे के सामाजिक, आर्थिक स्तर, माता–पिता का शिक्षा स्तर, एवं सत्र में बच्चे की उपस्थिति, विद्यालय में प्रवेश का समय, विद्यालय का वातावरण, शिक्षकों का शैक्षिक ज्ञानात्मक स्तर, प्रयोग मे लायी जाने वाली शिक्षण विधियों एवं उपकरणों आदि का ज्ञान सहायक सिद्ध हो सकता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

2. **व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण–** मनोवैज्ञानिकों ने पिछड़ेपन का कारण बच्चों का मन्दबुद्धि होना पाया है। बुद्धि अर्जन के लिए उनके आयु वर्ग के लिए उपलब्धि मानकीकृत परीक्षण पर मानसिक आयु ज्ञात कर ली गई है। इसके बाद गणना निम्न सूत्र से कर लेते हैं–

$$\text{बुद्धिलब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

$$I.Q. = \frac{M.A.}{C.A.} \times 100$$

3. **मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण–** शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों को पहले से स्थापित (परीक्षित) परीक्षणों द्वारा पता लगाया जा सकता है।

4 **उपलब्धि परीक्षण–**छात्र द्वारा दी गई परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों के आधार सांख्यिकीय विधि (औसत या सामान्य) से अन्तर ज्ञात कर शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों का पता लगाया जा सकता है।

5. **सामूहिक परीक्षण–** अध्यापक द्वारा कक्षा–कक्ष में सामूहिक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग किया जा सकता है यह शाब्दिक एवं अशाब्दिक दोनों प्रकार का हो सकता है।

6. **अन्य मनोवैज्ञानिक परीक्षण–** कभी–कभी बच्चे के पिछड़ेपन का कारण शैक्षिक या बौद्धिक न होकर मनोवैज्ञानिक होता है। जैसे बच्चे का कक्षा और घर में कुसमायोजन, प्रेरणा व प्रोत्साहन का अभाव, शिक्षा या विशेष विषय की अज्ञानता, प्रतिकूल अभिवृद्धि सावेंगिक व सामाजिक कुसमायोजन, मानसिक द्वन्द, दुश्चिन्ता आदि का पता लगाने के लिए साक्षात्कार, माता–पिता से विचार–विमर्श आदि तकनीकियो का प्रयोग कर अध्ययन किया जा सकता है।

शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों की शिक्षा

प्रशिक्षु चर्चा करें– शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों की शिक्षा व्यवस्था कैसी हो?

चर्चा के उपरान्त स्पष्ट करें कि शैक्षिक रूप से पिछड़े बच्चों की शिक्षा व्यवस्था निम्नलिखित बिन्दुओं पर की जा सकती है–

- सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार द्वारा।
- धीमी गति से पढ़ाना।
- व्यवसायिक प्रशिक्षण देना।
- विशेष विद्यालयों की व्यवस्था।
- श्रव्य–दृश्य साधनों का प्रयोग।

Downloaded From www.dietmathura.org

- आत्म विश्वास में वृद्धि कराकर।
- विशेषज्ञों द्वारा शिक्षा।
- छोटी कक्षाओं एवं उपयुक्त निर्देशन देकर
- पिछड़ेपन का पता लगाकर उसके निवारण द्वारा
- श्रेणीहीन कक्षा के द्वारा
- उपचारात्मक कक्षाओं के द्वारा
- सरल एवं रचनात्मक विषयों के अध्ययन से
- क्रियात्मक विधियों के प्रयोग द्वारा
- कक्षोन्नति, पूरे वर्ष के कार्यपर
- बार–बार बताया जाना
- अभिलेख रखना
- मानसिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान
- दूषित शिक्षा प्रणाली में सुधार द्वारा
- राज्य की ओर से सुविधा प्रदान कर
- शोध कार्यों की प्रचुरता द्वारा
- सभी का सहयोग आवश्यक
- अभिप्रेरण प्रदान कर
- आर्थिक सहायता देकर
- शैक्षिक परिभ्रमण द्वारा
- मनोवैज्ञानिक निर्देशन के द्वारा

आंशिक रूप से शारीरिक अक्षम बच्चे (दृष्टि बाधित, श्रवण बाधित, वाक्दोष, अस्थि बाधित)

आंशिक रूप से अक्षम बच्चे का अर्थ

प्रशिक्षु चर्चा करें–

- आंशिक रूप से अक्षम बच्चों से आप क्या समझते हैं?

चर्चा उपरान्त बताएं कि आंशिक रूप से अक्षम बच्चों की अनेक परिभाषाएं दी गई हैं, जिन्हें तीन प्रकार से विभाजित किया जा सकता है–

- कुछ परिभाषाओं द्वारा बाधित (अक्षम) और सामान्य में कोई सीमा सुनिश्चित नहीं की गई।

Downloaded From www.dietmathura.org

- कुछ परिभाषाओं में शारीरिक बाधित (अक्षम), असमर्थी एवं अपंग को एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया गया।
- कुछ अन्य परिभाषाओं में उपर्युक्त शब्दावली को अलग–अलग अर्थों में प्रयुक्त किया गया और उनके मानदण्ड भी बताये गये हैं।

शब्दकोष में शारीरिक रूप से अक्षम की परिभाषा के अन्तर्गत यह कहा गया है कि ऐसे बच्चों में शारीरिक दोष होता है और कार्य क्षमता भी कम होती है। वे व्यक्तिगत एवं सामाजिक कार्यों का निर्वाह नहीं कर पाते हैं।

अन्य परिभाषा में आंशिक अक्षमता की परिभाषा में कहा गया है कि ऐसे बच्चे या बालिका का कोई न कोई अंग दुर्बल होता है, जिससे वे अपनी सामान्य क्रियायें नहीं कर पाते और उसे आंशिक शारीरिक अक्षम कहा जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं का विवेचन करने से यह स्पष्ट होता है कि आंशिक अक्षम बच्चों या व्यक्तियों में समायोजन से सम्बन्धित अनेक समस्याएँ होती हैं। आंशिक शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों को चार वर्गों में विभाजित किया गया है –

(1) दृष्टि बाधित (2) श्रवण बाधित

(3) वाकदोष (4) अस्थिबाधित

आइए अब हम विस्तार से यह जानेगें कि आंशिक रूप से शारीरिक बच्चों की पहचान, विशेषता एवं इनकी शिक्षा व्यवस्था किस प्रकार से की जाती है। सर्वप्रथम हम दृष्टि बाधित बच्चे के विषय में जानेगें –

आंशिक रूप से दृष्टिबाधित का अर्थ एवं परिभाषा

आंशिक रूप से दृष्टिबाधित बच्चे वे बच्चे होते हैं जो मोटे छापे अथवा बड़े छापे की पठन सामग्री अथवा पुस्तकों को पढ़ने योग्य होते हैं। ऐसे बच्चों के नेत्रों में प्रतिविम्ब की तीव्रता बहुत कम होती है। मध्यम रूप में ऐसे दृष्टि बाधितों के नेत्रों के देखने की क्षमता 20/70 फीट होती है। इसका अर्थ यह है कि सामान्य बच्चे यदि 70 फीट से किसी वस्तु को देख सकता है तो आंशिक दृष्टि अक्षम बच्चे उसे 20 फीट पर से ही देख सकता है।

भारत सरकार के समाज कल्याण मन्त्रालय के (1987) के अनुसार, आंशिक रूप से अक्षम बच्चे वह है जो चश्मे की सहायता से मुद्रित पाठ्यवस्तु तथा दृश्य शैक्षिक सामग्री का उपयोग कर लेते हैं। ''

आंशिक दृष्टिबाधित बच्चे उत्तल दर्पण की सहायता से पढ़ सकते हैं। इस समूह के बच्चों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

1. ऐसे बच्चे जिनकी दृष्टि एक्युटी (20/70) तथा (20/200) के मध्य होता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

2. ऐसे बच्चे जो गम्भीर तथा बढ़ने वाली दृष्टि सम्बन्धी आंशिक दृष्टि बाधितों हेतु शिक्षा व्यवस्था को निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है–

- इन्हें विभिन्न प्रकार से प्रकाशों मे रखा जाय तथा उनके सम्बन्ध में कुछ कहने और देखने को प्रोत्साहन किया जाय जिससे कि उनके शब्दावली में वृद्धि हो।
- वस्तु के निरीक्षण में पर्याप्त समय दिया जाय और रंगीन प्रकाश दिया जाय।
- उनसे चित्रों, आकृतियों को बनाने को कहा जाय।
- वस्तुओं के आकार के बोध हेतु स्पर्श कराया जाय और लम्बाई एवं चौड़ाई का ज्ञान दिया जाय।
- स्मृति के विकास में संकेंतो का प्रयोग किया जाय, जटिलता को कम करने के लिए विशिष्ट क्रम में रखा जाय।
- गेंद को पकड़ने एवं फेकने का अभ्यास कराया जाय।
- उन्हें प्रत्ययों का शिक्षण कराया जाय।
- उन्हें तथ्यों एवं घटनाओं का भी बोध कराया जाय।
- इनके लिए विशेष कक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- इनके शिक्षण कार्य में सहकारिता योजना का प्रयोग करना चाहिए।
- कम देखने वाले बच्चों और औसत बच्चों का पाठ्यक्रम एक समान नहीं होता। अध्यापक को यह ध्यान देना चाहिए कि उनकी आंखों पर जोर न पड़े।
- इनके कक्षा–कक्ष में पर्याप्त प्रकाश होना चाहिए।
- इनके कक्षा का फर्नीचर ऐसा होना चाहिए कि वे ये सुविधानुसार चाहे जहाँ बैठ सके।
- इनके शिक्षण हेतु विशेष रूप से प्रशिक्षत अध्यापकों को लगाया जाना चाहिए।
- इनके शिक्षण में शिक्षण सहायक उपकरणों जैसे उत्तल लेन्स वाले चश्मे, दृष्टि यन्त्रों, आकृतियों, दृष्टि कैमरा चलायमान टेलीस्कोप, अक्षर चित्रों को बड़ा प्रदर्शित करने वाले यन्त्रों का प्रयोग करना चाहिए।

3. ऐसे बच्चे जो नेत्र सम्बन्धी रोगो से पीड़ित हैं या ऐसे रोगों से, जो दृष्टि को प्रभावित करते है।
4. ऐसे बच्चे जो उपरोक्त बच्चों में सम्मिलित नहीं है और जिनके पास औसत मस्तिष्क है तथा जो डाक्टरों तथा शिक्षा शास्त्रियों के अनुसार कम देखने वाले बच्चों को दिये गये साधनों तथा सामान द्वारा अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

आंशिक दृष्टि अक्षम बच्चों की पहचान एवं विशेषताएँ– प्रशिक्षु आंशिक दृष्टि अक्षम बच्चों की पहचान और विशेषताओं को निम्न लिखित बिन्दुओं से स्पष्ट करें–

- ये बच्चे अक्सर सिरदर्द की शिकायत करते है और आँखे बन्द कर लेते हैं।
- ये बच्चे बार–बार पलके झपकाते हैं।
- जब श्यामपट पर लिखी चीजों को लिखते समय बगल मे बैठे छात्र से जोर से पढ़ने को कहता है।
- पुस्तक तथा अन्य वस्तुओं को आँख के पास ले आता है।
- एक आँख को बन्द करके सिर को उपर उठाता है।
- अक्सर आँखों को मलता रहता है।
- आँखों का आकार भिन्न प्रकार का होता है।
- आँखों की पलक छोटी एवं आँख लाल रहती है।
- प्रकाश के प्रति संवेदनशील रहता है।
- जब दूर की वस्तुएँ देखता है तब शरीर में तनाव होता है।
- पढ़ने के समय अनुदेशन सामग्री नहीं रखता है।
- आँखों से पानी/आँसू बहता रहता है।
- चलते समय गलत तरीके से पैर रखता है।
- आँखों का टेढ़ापन या तिरछापन अथवा आँखें भारी होती हैं।

आंशिक दृष्टि अक्षम बच्चों की समस्याएंः

प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि इन बच्चों में बुद्धिस्तर का कम होना, शैक्षिक मन्दिता, मन्दवाणी विकास, व्यक्तित्व विक्षिप्त होना तथा सामाजिक समायोजन की समस्याएं पायी जाती हैं।

श्रवण बाधित बच्चे

प्रशिक्षु चर्चा करें कि श्रवण बाधित बच्चे से आप क्या समझते हैं?

चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें कि श्रवण बाधित बच्चों से अभिप्राय– ऐसे बच्चों से है बच्चे जो सुनने की क्षमता पूर्ण रूप से खो देते हैं वे अन्य बच्चों की अपेक्षा गम्भीर रूप से कठिनाईयों का सामना करते हैं। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि जो बच्चे पूर्णतया नहीं सुन पाते वे बहरे होते हैं।

आंशिक रूप से कम सुनने वाले बच्चे वे हैं जो श्रवण क्षमता को कुछ सीमा तक खो देते हैं। ऐसे बच्चों के जोर से की गई ध्वनि अथवा बोली गई आवाज को सुनने के लिए श्रवणयन्त्र की आवश्यकता नहीं होती है। श्रवणयन्त्र यदि इन्हें उपलब्ध हो तो आवाज को और अच्छी प्रकार से सुन

Downloaded From www.dietmathura.org

सकेगें। ऐसे बच्चों को सामान्य स्कूलों में तथा सामान्य बच्चों के साथ शिक्षा देने में कठिनाई नहीं आती है। जब किसी बच्चे के श्रवण अंगों में कोई दोष होता है तब इसे श्रवण बाधित कहा जाता है। ये दोष कान से बाहर अन्दर तथा मध्य में भी हो सकता है।

श्रवण बाधित बच्चों के लक्षण

प्रशिक्षु श्रवण बाधित बच्चों के लक्षण को निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट करें–

- इनके व्यवहार में लगातार एकाग्रता नहीं होती है।
- ऐसे बच्चे गतिविधियों के विषय में और कार्यों के प्रति अधिक सजग होते हैं।
- अध्यापक के होठों की गतिविधि और उसके हाव–भाव पर ध्यान देते हैं।
- ये अपने सिर को एक ओर झुकाकर या घुमाकर सुनने का प्रयास करते हैं।
- प्रश्न पूछनें पर अध्यापक से दुबारा पूछने को कहते है।
- एक जैसी ध्वनि के शब्दों से उसे प्रायः भ्रम हो जाता है।
- बिना जानकारी के भी वार्ता के बीच में विना वजह बोलता है।
- शाब्दिक निर्देशनों को समझने में और अुनसरण करने में कठिनाइयाँ होती हैं।
- कक्षा में ध्वनि के श्रोत को नहीं जान पाता है।
- शब्दों के सही उच्चारण में उसे कठिनाई होती है।
- बिना जानकारी के बड़बड़ाता रहता है।
- अधिक धीरे या अधिक तेज बोलता है।
- इनकी भाषा का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है।
- कभी–कभी कान दर्द की शिकायत करता है।

श्रवण बाधितों का वर्गीकरण

स्तर	श्रवण बाधिता के प्रकार	डेसीबल स्तर	बाधिता प्रतिशत (:)
1	कम बाधित बच्चे	35–51 DB तक	40 प्रतिशत
2	मन्द बाधित बच्चे	55–69 DB तक	40–50 प्रतिशत
3	गम्भीर बाधित बच्चे	70–89 DB तक	50–75 प्रतिशत
4	पूर्ण/गहन बाधित बच्चे	90–100 DB तक	100 प्रतिशत

Downloaded From www.dietmathura.org

आंशिक श्रवण बाधितों की शिक्षा

आंशिक श्रवण बाधितों की शिक्षा को हम निम्नलिखित प्रकार से कर सकते हैं –

(1) इनकी शिक्षा के लिए विशेष सम्प्रेषण तकनीक अपनायी जानी चाहिए जिसमें कि ओष्ठ पठन विधि, संकेत भाषा का प्रयोग करके, स्पर्श विधि से, शरीर से विभिन्न गति करवाकर एवं ध्वनि प्रवर्धक यन्त्रों का प्रयोग, जैसी उपयोगी सम्प्रेषण विधियों का प्रयोग प्रभावी रहेगा।

(2) **शिक्षण तकनीकी का प्रयोग–** श्रवण बाधित बच्चों के लिए सहायक सामग्री जैसे– आकृतियां, चित्र, संकेत शब्द, मॉडल, मानचित्रों का प्रयोग किया जा सकता है। बीच–बीच में अध्यापक द्वारा प्रश्न पूछना अनिवार्य है। विशेष अध्यापकों का प्रयोग किया जा सकता है। इनके लिए कम्प्यूटर अनुदेशन विधि लाभदायी है।

(3) पृथक कक्षाओं की व्यवस्था लाभदायक है।

(4) इन्हें अंशतः कुछ समय के लिए पृथक विद्यालय में रखा जा सकता है।

(5) "शिशु कार्यक्रम" चलाकर प्रारम्भ से ही शिक्षित किया जा सकता है।

(6) श्रवण बाधितों को शैक्षिक सुविधाएं प्रदान कर इसमें सहायक उपकरण, व्यवसायिक प्रशिक्षण, पूर्व प्राथमिक शिक्षा, कक्षा का समुचित प्रबन्ध, बोलने एवं पढ़ने का प्रशिक्षण, माता–पिता की भूमिका, विद्यालय वातावरण, आदि तत्वों का उचित सामन्वय करके किया जा सकता है।

(7) **प्रगतिक्रम–** श्रवण बाधित को इस प्रकार प्रशिक्षित करना कि वह सामान्य कक्षा के लिए स्वयं को तैयार कर सके।

(8) **शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन –** श्रवण बाधित बच्चों की अभिरूचि, अभियोग्यता को ध्यान में रखकर उन्हें शैक्षिक निर्देशन दिया जाना चाहिए। उन्हें आवश्यकतानुसार व्यवसायिक प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वह अपनी दैनिक जरूरतों के अनुसार धनार्जन कर सकें।

वाक्दोष

वाक्दोष का अर्थ

प्रशिक्षु चर्चा करें– वाक्दोष से आप क्या समझते हैं?

चर्चा उपरान्त स्पष्ट करें– **लाहन** एवं **काफमैन** (1988) के अनुसार, ''वाणी मुखर भाषा के ध्वनि की क्रमबद्ध एवं व्यवहारिक अभिव्यक्ति है।'' जब इस प्रकार उपर्युक्त से अलग या भिन्न स्थिति उत्पन्न होती है तो यही स्थिति वाकदोष कहलाती है।

प्रायः हमने अपने सामाजिक जीवन में देखा है कि जिन लोगों में वाक्दोष पाया जाता है, उनमें ध्वनि स्थानान्तरण, विचलन, विकृति एवं योग देखने को मिलता है जैसे कि– आ रहा हूँ, को आरांऊ,

Downloaded From www.dietmathura.org

'पानी ' को 'मानी' 'चाकू को 'कॉचू', 'अमरूद' को 'अरमूद', आदि प्रकार का दोष देखने को मिलता है। उच्चारण बाधा होना भी एक वाकदोष है। इनका कारण वातावरणीय प्रभाव, सामायिक निर्देशन का अभाव, मुख– सुख, व कण्ठ, तालू, मूर्धा, दन्त एवं श्रवणेन्द्रियों का विकृत होना है। साधारण रूप वाक बाधित बच्चों मे वाकदोष से प्रभावित बच्चों का प्रतिशत काफी अधिक (70% - 80%) पाया जाता है। अल्पायु बच्चों में यह दोष अपरिपक्व भाष के कारण होता है जो अधिकांशतः आयु के साथ स्वतः समाप्त हो जाता है।

इस प्रकार से वाक या वाणी दोष बाधित बच्चे वे बच्चे हैं जो मुख की आवाज, बोले गये शब्दों में तालमेल तथा शब्दों को संयोजित करने में कठिनाइ महसूस करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वे बालते समय कुछ शब्दो को छोड़ देते हैं बदल देते हैं, तोड़– मरोड़ देते हैं तथा कुछ जोड़ देते हैं। वाक्‌दोष बाधित बच्चों में बोलने की लयक्रम टूट जाता है और उनकी आवाज में हकलाहट होती हैं।

राइपर (1979) के अनुसार, '' बच्चे जिसको सम्प्रेषण में समस्या होती है और उसका स्वर या वाणी अन्य बच्चों से भिन्न प्रकार की होती है। वह स्वयं भी सजग होता है कि अपनी बात कहने में असमर्थ है। उसकी वाणी मधुर नहीं होती है। ''

वाकदोष वाले बच्चों की विशेषताएँ

प्रशिक्षु वाक्‌दोष वाले बच्चों की विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट करें–

- वाकदोष तब उत्पन्न होता है जब सामान्य बच्चों से ऐसे बच्चों की बोलचाल विशिष्ट होती है जैसे– सम्प्रेषण में बाधा उत्पन्न होती है, बोलते समय उसे बहुत एकाग्र होना पड़ता है, तथा बोलने एवं सुनने वाले दोनों को कठिनाई होती है।
- इस प्रकार के जो बच्चे होते हैं, उनकी श्वसन क्रिया असामान्य होती है और उनकी आवाज भी हल्की होती है। जो बोलते है वह स्पष्ट नहीं होता, बोलने में संकोच करते हैं तथा धारा प्रवाह नहीं बोल पाते हैं।
- इनकी आवाज में मधुरता नहीं होती है। इनकी आयु में अनुकूलता नहीं होती है।
- इनके तालु एवं जबड़े में दोष होता है जिसके कारण ये शब्दों का सही उच्चारण नहीं कर पाते हैं।
- कुछ बच्चों में श्रोता प्रक्रिया में दोष होना अथवा वाक के स्वर मे बोलना जिससे उनमे नासिक दोष होता है जिसके कारण ये नाक के स्वर में बोलते हैं और सुनने वाले को समझने में कठिनाई होती है। इसके अनेक कारण होते हैं जैसे संक्रामक रोग, टोन्सिल्स में सूजन आदि।
- कुछ बच्चे बोलने में तुतलाते हैं। धारा प्रवाह बोलने में उन्हें कठिनाई होती है, रुक–रुक कर बोलते हैं। इस प्रकार का दोष गले ओर जीभ में दोष के कारण होता है। इन्हें बोलने में संकोच होता है परन्तु बलपूर्वक बोलते हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

वाक् दोष के प्रकार

प्रशिक्षु वाक्‌दोष के प्रकार को स्पष्ट करने के लिए बताएं कि यह निम्नलिखित छः प्रकार का होता है–

- प्रक्रियात्मक तथा उच्चारणात्मक दोष
- हकलाना
- आवाज की समस्या
- अंगीय वाणी के दोष
- कम सुनने वाले बच्चों के साथ वाणी की समस्या
- देर से बोलने वाले का विकास

वाकदोष वाले बच्चों की शिक्षा

प्रशिक्षु बताएं कि यदि हम वाक दोष वाले बच्चों की शिक्षा में मनोवैज्ञानिकों एवं नाक, कान, गला (E.N.T.) विशेषज्ञों की सलाह से कार्य करे तो निम्नलिखित बिन्दुओं पर आधारित शिक्षा प्रदान की जा सकती है।

- **पर्याप्त अभिप्रेरणा प्रदान करना** – अध्यापकों को सबसे पहले ऐसे बच्चों को चिन्हित कर उन्हें प्रोत्साहन एवं अभिप्रेरणा प्रदान करना चाहिए। इससे उसके आत्म विश्वास में वृद्धि होगी और वह उत्सुकता से सीखने के लिए प्रेरित होगा।
- **दोष पर बल न देना–** शिक्षक को वाकदोष वाले बच्चों के बाधित स्तर एवं मात्रा पर अधिक बल नहीं देना चाहिए अन्यथा वह हतोत्साहित हो जायेगा तथा उसमें अपेक्षित सुधार नहीं हो पायेगा।
- **सही निदान करना–** किसी भी वाकदोष वाले बच्चों को शिक्षा देने से पूर्व उसकी आवश्यकतानुसार (स्तर एवं मात्रा का पता लगाये) ही निदान करना चाहिए क्योंकि जल्दबाजी में किया गया निदान गलत निष्कर्षो को जन्म देता है। परिणामस्वरूप अपेक्षित सुधार के स्थान पर अनापेक्षित क्षति की सम्भावना होती है।
- **उपयुक्त वाक अभ्यास–** वाक् दोष वाले बच्चों को समुचित एवं पर्याप्त वाक् अभ्यास देना चाहिए। बच्चे के लिए कैसा अभ्यास प्रभावी रहेगा इसका पता निदान करते समय ही चल जाता है। शिक्षक को बच्चों के सामने सही एवं गलत दोनो स्वयं बोलकर तत्पश्चात बच्चों से अनुकरण अभ्यास कराया जाना चाहिए।
- **दुश्चिंता से मुक्ति–** 70 से 80 प्रतिशत व्यक्ति कही न कही, कभी न कभी हकलाहट या तुतलाहट से ग्रसित होते है। यह दोष अधिकतर सांवेगिक कारणों जैसे–चिन्ता, लज्जा, ग्लानि, आदि से उत्पन्न होते हैं। इसलिए शिक्षकों को चाहिए कि कक्षा का वातावरण आनन्दपूर्ण, सुखप्रद, मैत्रीभावना से परिपूर्ण और स्वस्थ्य रखे। अतएव शिक्षक का व्यवहार एवं कक्षा का वातावरण ऐसा होना चाहिए जिससे बच्चों में चिन्ता उत्पन्न न हो।

Downloaded From www.dietmathura.org

- **लज्जा एवं घबराहट से बचाव—** अध्यापकों को चाहिए कि वह वाक दोष से पीड़ित बच्चों को कक्षा में लज्जा एवं घबराहट उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों को दूर करे। प्रायः सामान्य कक्षाओं में सामान्य बच्चे इस प्रकार के बच्चों को हँसी—मजाक का केन्द्र बना लेते हैं ऐसी परिस्थितियों में इन बच्चों में कुंठा एवं अवसाद की स्थिति का जन्म होता है।

जहाँ तक संभव हो सके ऐसे बच्चों का पता उनके बाल्यकाल में लगाकर उपचार कराना चाहिए ताकि सामान्य बच्चों के साथ उनका समायोजन स्थापित हो सके।

अस्थि बाधित बच्चे

- ***प्रशिक्षु चर्चा करें कि अस्थि बाधित बच्चे से आपका क्या अभिप्राय है?***

चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि अस्थि बाधित बच्चे ऐसे बच्चे होते हैं जिनकी अस्थियां, अस्थियों के जोड़, अथवा शरीर में विभिन्न मांसपेशियां सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाती हैं। उनका कार्य करने की मात्रा इतनी कम होती है कि उन्हें कृत्रिम रूप से हाथ या पैर की आवश्यकता पड़ती है। कुछ बच्चे मस्तिष्क के ठीक प्रकार कार्य न करने के कारण वह शारीरिक (Motor) हाथ/पैर से कार्य करने में कठिनाई का अनुंभव करते हैं। हम अस्थि बाधितों के सम्बन्ध में निम्नलिखित परिभाषा से जान सकते है

अस्थिबाधित बच्चे वे बच्चे है जिनकी किसी एक या अधिक हड्डियों में दोष आ गया हो या क्षतिग्रस्त हो गई हो जिससे वो सामान्य बच्चों की भाँति शारीरिक अभ्यास करने में असमर्थ हो गया हो, ऐसे बच्चों की माँसपेशियों तथा जोड़ों अथवा अस्थियों में किसी कारण से दोष आ जाता है।

अस्थिबाधित बच्चों की विशेषताएं

शारीरिक दृष्टि से बाधित बच्चे सामान्यतः मानसिक दृष्टि से सामान्य या सामान्य से अधिक होते हैं यह पोलियो तथा अन्य रोगों से छतिग्रस्त हो जाते हैं। शोध अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि ऐसे बच्चे सामान्य बच्चों से उत्तम होते हैं परन्तु इन बच्चों की आवश्यकताएं भिन्न प्रकार की होती हैं। इनके द्वारा प्रयोग किये जा रहे कृत्रिम अंगों के साथ अनुकूलन (समायोजन) करना इनकी सबसे बड़ी समस्या होती हैं। शैक्षिक अनुदेशन में तकनीक के प्रयोग से इनकी समस्या कम हुई है। शारीरिक रूप से बाधित बच्चे क्रियाशील कम होते हैं ये अपने को एकाग्र भी कम समय के लिए ही कर पाते हैं। अपने आप को किसी कार्य में कम समय तक ही लगा पाते हैं। यह दूसरों पर आश्रित रहते हैं साथियों के साथ अन्तक्रिया कम कर पाते हैं। इनमें हीनग्रन्थियों का विकास हो जाता है। इनमें उत्सुकता होती है। इन्हें सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में कठिनाई होती है। प्रशिक्षु स्पष्ट करें कि अस्थिबाधिता के निम्नलिखित आठ प्रकारों का वर्णन चिकित्सा विज्ञान में किया गया है —

(1) लूले—लगड़े, हथकटे

Downloaded From www.dietmathura.org

(2) एक या इससे अधिक अंगो का लकवा

(3) पांवफिरा (club foot)

(4) मेरूदण्ड का वक्र होना (convature of the spaine)

(5) विकृत नितम्ब (Malformed hips)

(6) मष्तिष्कीय पक्षाघात (cerbral palsy)

(7) मेरूदण्डयी द्विशामुखी (Spaine bifida)

(8) मांसपेशीय असमर्थता (Muscular dyrtrophy)

अस्थिबाधित बच्चों की पहचान

इनकी पहचान निम्नलिखित लक्षणों के आधार पर की जा सकती है –

- शारीरिक अंगों पर समुचित नियन्त्रण न होना।
- वैसाखियों की सहायता से चलना।
- शारीरिक कार्यों तथा अभ्यास में दर्द एवं कठिनाई का अनुभव करना।
- वस्तुओं को उठाने एवं रखने में कठिनाई का अनुभव करना
- लड़खड़ा कर चलना।
- चलते –चलते गिर जाना।
- शारीरिक अंगों की गतिविधि में नियन्त्रण का अभाव।
- अंगों का असामान्य होना।
- जोड़ों में दर्द रहना।
- चलने में कठिनाई का अनुभव एवं ज्यादा न चल पाना।
- नकली अंगों की सहायता लेना/ उपयोग करना।
- चलने, उठने तथा बैठने में कठिनाइयों का अनुभव करना।

अस्थिबाधिता के कारण

(1) जन्मजात अनियमितता के कारण

(2) दुर्घटना के कारण

(3) बीमारी के कारण

Downloaded From www.dietmathura.org

अस्थि बाधित बच्चों की शिक्षा

ऐसे बच्चों की शिक्षा को निम्नलिखित प्रकार से वर्णित किया जा सकता है–

(1) उपचार सुविधाएं प्रदान कर

(2) प्रशिक्षित अध्यापक द्वारा शिक्षण कार्य

(3) विशेष कक्षाओं के आयोजन द्वारा।

(4) अतिरिक्त कक्षा के सृजन से।

(5) विशेष विद्यालयों के निर्माण से।

(6) पाठ्यक्रम को आवश्यकतानुकूल बनाकर।

(7) अभिवृत्तियों में परिवर्तन करके।

(8) प्रशासनिक परिवर्तन द्वारा।

(9) अधिगम अनुभव करवाकर।

(10) समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा।

(11) पुनर्वास योजना बनाकर उन्हें लागू करना।

(12) समन्वित शिक्षा द्वारा।

(13) मनोवैज्ञानिक परामर्श दिलवाकर।

(14) आर्थिक सहायता द्वारा।

(15) सहायक सामग्री प्रदान कर।

अपवंचित वर्ग के बच्चे (अनु0जाति एवं जनजाति, पिछड़ी जाति, घुमन्तु वर्ग तथा श्रमिक परिवारों के बच्चे)

- **प्रशिक्षु चर्चा करें कि अपवंचित वर्ग के बच्चे से क्या अभिप्राय है?**

  चर्चा उपरान्त प्रशिक्षु इस प्रकार स्पष्ट करें कि –

वंचन का अर्थ (Meaning of diprivation) .वंचन वह परिवेश जन्य अवस्था है जिसका कि स्वरूप एवं अर्थ सामाजिक, सांस्कृतिक तथा भिन्नता के साथ–साथ परिवर्तित होता जाता है। यहाँ पर वंचन को अपेक्षित अनुभवों की न्यूनता के अर्थ में लिया जाता है, न कि किसी समूह की सदस्यता के रूप में। यह दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक है। इस विषय में दुर्गानन्द सिन्हा, मिश्र तथा त्रिपाठी, रथ, दास तथा दास ने अपने अध्ययनों में विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों का उल्लेख किया है।

Downloaded From www.dietmathura.org

यहाँ पर अध्ययन की मुख्य धारा वचंन रूप में संवेदी अनुभवों के वचंन से है जिसमें परिवेशीय अनुभव प्रमुख होने के कारण बच्चों के विकास पर इनका सीधा परन्तु निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। (युनेस्को) UNESCO ने अपने भारतीय अध्ययन आख्या (Indian Study Report) में चार प्रकार के असुविधा सम्पन्न समूहों का उल्लेख किया है। यह अध्ययन अनु0जाति एवं जनजाति, पिछड़े एवं अल्पसंख्यकों आदि जाति के अध्ययनों पर आधारित है। यह समूह है –

(1) अनुसूचित जाति

(2) अनुसूचित जनजाति

(3) भ्रमणकारी (घुमन्तु) जनजाति (Nounadic tribe)

(4) सन्दर्भित जनजाति (Denotified tribe)

(5) पिछड़ी जाति।

(6) श्रमिक परिवारों के बच्चे

इन परिवारों के अध्ययन के बाद बच्चों में निम्न लक्षण देखने को मिले –

(1) निम्न महत्वाकांक्षा

(2) निम्न शैक्षिक उपलब्धि

(3) निम्न व्यक्तित्व विशेषताएँ जैसे– अपने विचारों में अस्थिरता, अतिउत्साही (hyperActive) और समूह पालक न्यून बहिर्मुखी, न्यून आत्मावलोकन

(4) अनुपयुक्त आत्म सम्प्रत्यय

(5) बौद्धिक मन्दता

(6) सामाजिक कुशलता का अभाव

(7) भाषा विपन्नता

(8) कक्षाओं को छोड़ना अथवा पढ़ाई के प्रति उदासीन होना

अपवंचित बच्चों की शिक्षा

प्रशिक्षु बताएं कि हम लोग यह जान चुके हैं कि इस प्रकार के समूह के बच्चों के लिए विद्यालयी वातावरण, एवं परिवेश उनके अनुकूल नहीं होता है और यही बेमेलपन उनके सर्वागींण विकास में बाधक होता है। इसे दूर करने के लिए अध्यापकों तथा अभिभावकों के दृष्टिकोण को बदलने का प्रयास आवश्यक हो जाता है। **रथ (1982)** ने अपवंचित बच्चों की समस्याओं का विश्लेषण करते हुए तीन विशिष्ट उपायों की संस्तुति की थी :–

Downloaded From www.dietmathura.org

(1) पूर्व विद्यालय वातावरण के कारण उत्पन्न अधिगम न्यूनताओं को दूर करने का प्रयास,

(2) विशिष्ट विषयों में न्यूनताओं को दूर करने का प्रयास

(3) वंचित बच्चों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास

यह सर्वविदित है कि शारीरिक और मानसिक विशेषताओं में वैयक्तिक भिन्नता होती है। अतः यह मानना कि सभी बच्चे अकसर मिलने पर समान क्षमता वाले हो जायेगें यह तर्कसंगत नहीं लगता है। अतः क्षमता की वास्तविक मूल्यांकन होना चाहिए। इस मूल्यांकन से न केवल कमियों के सम्बन्ध में ज्ञान होता है बल्कि ऐसे कौशल और क्षमताओं का पता लगता है जोकि अपवंचित बच्चों में होती है। ऐसे कौशलों को विकसित तथा पुरस्कृत करना भी वंचित बच्चों की स्थिति को सुधारने में सहयोगी सिद्ध होता है।

इस प्रकार से अपवंचित बच्चों की समस्या बहुआयामी है और इसके समाधान के लिए विद्यालय, परिवार, तथा समाज द्वारा सभी अवसरों पर प्रयास अपेक्षित है। यह एक विडम्बना है कि अब तक किये गये अधिकांश अध्ययनों का केन्द्र वंचित बच्चे रहा है। जीवन में उसकी असफलता के लिए इसकी बुद्धि, संज्ञान तथा अभिप्रेरणा की कमियों को उत्तरदायी मानकर उसमें परिवर्तन लाने के सुझाव दिये जाते रहे हैं। यह कार्य सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिवर्तन से जुड़ा है। जिसका हल तत्कालिक न होकर दीर्घकालिक है। समस्त वैज्ञानिकों का दायित्व इस दिशा में जन चेतना को जागृत करना है और साथ–साथ उन उपायों की खोज है जो समाज एवं संस्कृति के विशिष्ट सन्दर्भ में वंचन से प्रभावित बच्चों को उनकी क्षमता के उपयुक्त अवसर दे सकें। इस दिशा में पर्याप्त शोध तथा अध्ययन अपेक्षित है।

समस्यात्मक बच्चे (Problematic children)

प्रशिक्षु चर्चा करें कि समस्यात्मक बच्चे से आपका क्या अभिप्राय हैं?

चर्चा उपरान्त समस्यात्मक बच्चे को इस प्रकार स्पष्ट करें कि समस्यात्मक बच्चों से हमारा तात्पर्य उन बच्चों से है जो परिवार एवं कक्षा व विद्यालय में भाँति–भाँति की समस्याएं उत्पन्न करते हैं। ऐसे बच्चों का व्यवहार सामान्य प्रकार के बच्चों से भिन्न होता है। वे वातावरण के साथ अपने आप को समायोजित नहीं कर पाते हैं। ऐसे बच्चे अपने अध्यापकों के लिए समस्या बने रहते हैं। समस्यात्मक बच्चे कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे– चोरी करने वाले बच्चे, झूठ बोलने वाले बच्चे, क्रोध करने वाले बच्चे, विद्यालय से भाग जाने वाले बच्चे, गृहकार्य न करने वाले बच्चे, कक्षा में देर से आने वाले बच्चे आदि। समस्यात्मक बच्चों के समस्यात्मक व्यवहार के कारणों को जानकर ऐसे बच्चों के व्यवहार में सुधार लाया जा सकता हैं। प्रायः बच्चे आवश्यकताएं पूरी न होने पर, अत्यधिक लाड़ प्यार में, कठोर अनुशासन के कारण या असुरक्षा की भावना के कारण, विभिन्न प्रकार का समस्यात्मक व्यवहार करता

Downloaded From www.dietmathura.org

हैं। समस्यात्मक बच्चों को उनके समस्यात्मक व्यवहार के लिए प्रताड़ित अथवा शारीरिक दण्ड न देकर मनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षा देनी चाहिए।

बैलेस्टाइन के अनुसार, ''समस्यात्मक बच्चे वे बच्चे हैं जिनके व्यवहार तथा व्यक्तित्व इस सीमा तक असामान्य होते हैं कि वे घर, विद्यालय तथा समाज में समस्याओं के जनक बन जाते हैं। ''

समस्यात्मक बच्चों की पहचान

प्रशिक्षु बताएं कि समस्यात्मक बच्चों की पहचान निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है :–

(1) निरीक्षण विधि का प्रयोग करके

(2) साक्षात्कार द्वारा

(3) अभिभावकों, शिक्षकों तथा मित्रों से वार्तालाप

(4) कथात्मक अभिलेख

(5) संचयी अभिलेख के द्वारा

(6) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के द्वारा

समस्यात्मक बच्चों के लक्षण

समस्यात्मक बच्चों के लक्षण निम्नलिखित हैं –

(अ) न्यून मानसिक दक्षता और समस्यात्मक लक्षण

(1) पैसे एवं अन्य वस्तुओं की चोरी करना

(2) स्कूल के कार्यों में सक्रिय न होना

(3) शारीरिक एवं मानसिक कष्ट देकर आनन्द लेना

(4) अनुशासन का विरोध करना

(5) बुरा आचरण

(6) असहयोग की प्रवृत्ति रखना

(7) सन्देह करना

(8) धोखा देना

(9) अश्लील बातें करना

(10) बिस्तर गीला करना

Downloaded From www.dietmathura.org

(ब) अत्यधिक मानसिक दक्षता का होना

(1) मानसिक द्वन्द से ग्रसित होना

(2) हीन भावना का शिकार होना

(3) सीमा से अधिक कठोर व्यवहार का होना

(4) अप्रसन्न एवं चिड़चिड़े होना

(5) भयभीत परन्तु आत्मकेन्द्रित होना

(6) लोगो के विरोध का शिकार होना

(7) अनावश्यक तर्क आधारित आख्याए प्रस्तुत करना।

समस्यात्मक व्यवहार के कारण

(1) आनुवंशिक कारण

(2) शारीरिक कारण

(3) स्वभाव सम्बन्धी तथा संवेगात्मक कारण

(4) सामाजिक तथा परिवेशीय कारण

समस्यात्मक बच्चों की शिक्षा

समस्यात्मक बच्चों की शिक्षा निम्नलिखित तरीके से की जा सकती है–

(1) माता–पिता को बच्चों के प्रति प्रेम, सहानुभूति, तथा सहयोगात्मक व्यवहार करना चाहिए।

(2) बच्चे की मूल प्रवृत्तियों का दमन न करके उनका शमन या परिशोधन किया जाना चाहिए।

(3) बच्चों को अच्छे कार्य के लिए प्रोत्साहन तथा पुरस्कार दिया जाना चाहिए।

(4) बच्चे के सहयोगियों का गुप्त निरीक्षण रखना चाहिए।

(5) बच्चों को नैतिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।

(6) बच्चों को मनोरंजन के उचित अवसर दिये जाने चाहिए।

(7) बच्चे की व्यक्तिगत आवश्यकता की पूर्ति की जानी चाहिए।

(8) अध्यापक का व्यवहार मधुर एवं सहयोगात्मक होना चाहिए।

(9) बच्चों की आवश्यकता, परिस्थिति तथा क्षमता के अनुरूप ही उन्हे गृहकार्य दिया जाना चाहिए।

Downloaded From www.dietmathura.org

(10) बच्चों में आत्म अनुशासन की भावना विकसित की जानी चाहिए।

(11) विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन कर बच्चों को अपनी रूचियाँ प्रदर्शित करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

(12) किसी भी समस्या का व्यवहारिक मनोवैज्ञानिक हल खोजना चाहिए।

प्रशिक्षु पुनरावृत्ति निम्नलिखित बिन्दुओं से कराएं, यथा—

- जो बच्चे सामान्य बच्चों से भिन्न शारीरिक—मानसिक क्षमता वाले होते हैं और उनकी भिन्न शारीरिक —मानसिक आवश्यकताएं होती हैं वे बच्चे विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे कहलाते हैं।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों में अन्तर्मुखी, निराशावादी, सांवेगिक, स्थिर, शर्मीले, निष्क्रिय, आत्मकेन्द्रित, चिन्ताग्रस्त, निर्भर प्रवृत्ति, कभी—कभी उग्र, एकाकी भावना आदि जैसे गुण पाये जाते हैं।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान के लिए अध्यापक द्वारा निरीक्षण, चिकित्सकीय परीक्षण, मानसिक परीक्षण, शैक्षिक उपलब्धि परीक्षण, व्यवहार के अवलोकन तथा समाजमिति एवं साक्षात्कार आदि विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को मुख्य रूप से हम चार प्रकारों क्रमशः शैक्षिक रूप से, शारीरिक रूप से, मानसिक रूप से, तथा सामाजिक रूप से विभक्त कर सकते हैं।
- प्रतिभाशाली बच्चे की बुद्धिलब्धि 140 या अधिक होती है।
- जो बच्चे सामान्य बच्चों द्वारा सीखनें में लिए जाने वाले समय से अधिक समय में सीखते हैं धीमें गति से सीखने वाले छात्र कहलाते हैं।
- सिरिल बर्ट नें 85 से कम बुद्धिलब्धि वाले बच्चों को पिछड़ी बुद्धिलब्धि (कमजोर) कहा है।
- आंशिक रूप से शारीरिक अक्षम बच्चे को हम चार मुख्य प्रकारों—दृष्टिबाधित, श्रवण बाधित, वाकदोष, एवं अस्थिबाधित में विभक्त करते हैं।
- अपवंचित वर्ग उस वर्ग को कहते हैं जो सामाजिक परिवेश की विभिन्न स्थितियों के कारण वंचित होते हैं और मुख्यधारा से हटकर होते हैं।
- अपवंचित वर्ग में अनुसूचित जाति/जनजाति, पिछड़ी जाति, घुमन्तु (खानाबदोश) परिवारों तथा श्रमिक परिवारों के बच्चे होते हैं।
- जो बच्चे कक्षा, विद्यालय एवं परिवार (समाज) में समस्या उत्पन्न करते हैं, समस्यात्मक बच्चे कहलाते हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था

प्रशिक्षु चर्चा करें कि विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था कैसी हों?

चर्चा उपरान्त स्पष्ट कि भारत जैसे प्रजातान्त्रिक देश में प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा का अधिकार है। वर्तमान समय में शिक्षा के अधिकार कानून को लागू करना इसका परिचायक है। साथ पूर्व में संविधान के नीतीनिदेशक तत्व (अनु0 45 मे) शामिल अनिवार्य शिक्षा के उपबन्ध को जीवन जीने के अधिकार (अनु0 21) में अन्तः स्थापित का नया उपबन्ध (अनु0 21 क) बना दिया है। इसमें प्रत्येक बच्चे को यह अधिकार है कि वह अपने सामर्थ्य के अनुसार सहायता ग्रहण करें। प्रत्येक कक्षा–कक्ष में शिक्षण की कुछ सम्बन्धित समस्याएं होती है तथा कुछ बच्चों में इसकी प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। इस प्रकार के बच्चों में अध्यापक की सहायता की अधिक आवश्यकता पड़ती है। परन्तु कभी–कभी अध्यापक इनकी आवश्यकता को नहीं समझ पाते हैं तब अध्यापक अपने आप को असफल अनुभव करने लगते हैं, क्योंकि विशिष्ट बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सामान्य तथा विशिष्ट शिक्षा कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। पूर्ण रूप से लाभान्वित होनें के लिए विशेष सहायता, साधनो एवं अधिगम सामग्री की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त उपकरणों की भी आवश्यकता होती है। जैसे की श्रवण बाधित बच्चों के लिए श्रवण यन्त्र, वाणी प्रशिक्षक एवं दृष्टि बाधित बच्चों के लिए देखने के उपकरण जैसे 'उत्तल लेन्स 'जिसकी सहायता से छोटे शब्दो को बड़े शब्दों के रूप मे देखा जा सकता है। इसी प्रकार मन्दबुद्धि बच्चों को खिलौने तथा खेलने की सामग्री की आवश्यकता होती है। प्रतिभाशाली बच्चों को उच्च स्तर की अधिगम सामग्री, अथवा सपुस्तिका एवं योग्य अध्यापक की आवश्यकता होती है अधिकांश विद्यालयों में प्रतिभाशाली या विशिष्ट बच्चों के शिक्षण हेतु पढ़ाने में सहायक सामग्री तथा साधन पूर्णतया उपलब्ध नहीं होते हैं। इससे बच्चों की वास्तविक क्षमता तथा कार्यकलापों में अन्तर बढ़ जाता है। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था देते समय तीन प्रमुख समस्याएं क्रमशः विशिष्ट बच्चों को समझने की समस्या, औपचारिक शिक्षा की समस्या, एवं व्यवसायिक प्रशिक्षण की आती है। चूँकि विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे कई प्रकार के होते हैं विशिष्ट बच्चों के लिए उनकी श्रेणी के अनुसार ही शिक्षा कार्यक्रम बनाना चाहिए। सामान्य रूप से विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं–

(1) विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान व उनका आकलन करना

प्रशिक्षु बताएं कि अधिकांश विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे का चिन्हीकरण ही नहीं हो पाता है। परिणाम स्वरूप उनकी क्षमताओं का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। जबकि ऐसे बच्चों को यदि अध्यापकों द्वारा ध्यान दिया जाए तो आसानी से पहचाना जा सकता है। बच्चे को चिकित्सीय एवं मनोवैज्ञानिक सलाह दिलाने का प्रयास करना चाहिए। इस सम्बन्ध में 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद', नई दिल्ली द्वारा विकसित क्रियात्मक निर्धारण निर्देशिका के अनुसार निर्धारण किया जा सकता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

(2) सेवाओं का स्थापन

मनोवैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय निर्धारण के पश्चात विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को उपयुक्त श्रेणी तथा उपयुक्त शिक्षण संस्था में रखा जाना चाहिए। किसी भी शिक्षण संस्था में विशिष्ट बच्चों के स्तर का निर्धारण उनके अतीत तथा पिछले अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है। जहाँ तक शारीरिक व मानसिक बाधित बच्चों का सम्बन्ध है, इस सम्बन्ध में निम्नलिखित कार्यक्रम है–

(अ) सामान्य कक्षाओ में पूर्णकालिक स्थापन।

(ब) सामान्य कक्षा तथा विशिष्ट कक्षा में बारी–बारी से अंशकालिक स्थापन।

(स) विशिष्ट कक्षाओं में पूर्णकालिक स्थापन, विशिष्ट शिक्षण में पूर्णकालिक स्थापन।

(द) आवासीय शिक्षा संस्थाओ में पूर्णकालिक स्थापन।

चूँकि हमारे देश में बुद्धिमान, सृजनात्मक, भावात्मक तथा सामाजिक रूप से बाधित बच्चों के लिए विशिष्ट संस्थाओं तथा विशिष्ट कक्षाओं का प्रावधान नहीं है, इसलिए प्रभावित बच्चे सामान्य शिक्षण संस्थाओं मे शिक्षा ग्रहण करते हैं। पुणे में विलक्षण तथा प्रतिभाशाली बच्चों के लिए 'ज्ञान प्रबोधिनी' नामक संस्था की स्थापना की गई है।

(3) वैयक्तिकता पर बल

चूँकि विशिष्ट बच्चे एक विषमांगी समूह बनाते हैं। अर्थात विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे विभिन्न प्रकार के होते हैं, जो कि विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत हो सकते हैं। प्रत्येक श्रेणी के बच्चों की अपनी विशेषताएं होती हैं। बच्चों के विशिष्ट समान गुणों के परिमाण को विचार करते हुए उन्हें विभिन्न समूहों में बाँटा जा सकता है। इस प्रकार विशिष्ट बच्चों की शिक्षा उनकी वैयक्तिक विशेषताओं से मिलती जुलती होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में प्रत्येक विशिष्ट बच्चे की वैयक्तिकता के आधार पर शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

(4) अधिगम पर बल

यह आवश्यक नहीं है कि बच्चे किसी विषयवस्तु को उसी प्रकार से सीखे, जैसे अध्यापक सिखाते हैं। क्योंकि वर्तमान में शिक्षा की अपेक्षा अधिगम पर विशेष जोर देना न्यायसंगत है। अध्यापकों को चाहिए कि वे इस प्रकार से बच्चों को शिक्षा प्रदान करें कि वह अधिगम करने पर बल दें। जब विशिष्ट बच्चों का शैक्षिक कार्यक्रम बनाया जाय तो विशेषज्ञ को उपर्युक्त बातों पर बल दिया जाना चाहिए चाहे वो बच्चे शारीरिक रूप से विशिष्ट हो या सांवेगिक रूप से विशिष्ट हो, सामाजिक हो या प्रतिभाशाली बच्चे ही क्यों न हों।

(5) विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं का स्वरूप

हमारे देश में विशेष रूप से दृष्टि बाधित, श्रवणबाधित, मानसिक मन्दित, तथा शारीरिक व मानसिक रूप से बाधित बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षा स्थापित की गई है। विशिष्ट विद्यालय में प्रशिक्षित

Downloaded From www.dietmathura.org

अध्यापक संसाधनों, उपकरणों तथा अन्य विशेष सहायक सामग्री की सहायता से बच्चों की आवश्यकता के अनुरूप शिक्षण उपलब्ध कराते है। कुछ सरकारी संस्थाओं को छोड़कर प्रायः यह देखा गया है कि विशिष्ट शिक्षा पर पर्याप्त धन व्यय करना पड़ता है। कुछ बच्चों के अभिभावक सामान्य रूप से इतना अधिक धन खर्च करने की क्षमता नहीं रखते हैं। इसलिए आर्थिक संकट के कारण अपने बच्चों को मजबूर होकर शिक्षण संस्थान से हटा लेते हैं।

(6) समन्वित शिक्षा का स्थापन

शारीरिक एवं मानसिक रूप से बाधित बच्चों की शिक्षा की दिशा में एक नवीन प्रयास किया जा रहा है। बाधित बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ सामान्य शिक्षण संस्थाओं में शिक्षण दिया जा रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है कि ''जहाँ तक संभव होगा आंशिक रूप से बाधित बच्चों तथा हाथ–पैर से अक्षम बच्चों की शिक्षा सामान्य बच्चों की शिक्षा के समान ही होगी। जहाँ तक संभव होगा आंशिक रूप से बाधित बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षा जिला मुख्यालयों में विशिष्ट शिक्षा संस्थाएं तथा आवासीय शिक्षा संस्थाएं स्थापित की जाये। प्रत्येक संभव दशा में गम्भीर रूप से बाधित बच्चों की शिक्षा को प्रेरित किया जाये।

(7) भत्तों का प्रावधान

भारत सरकार ने शारीरिक रूप से बाधित बच्चों की शिक्षा के लिए कुछ भत्तो का प्रावधान किया है– जैसे यात्रा भत्ता, वर्दी भत्ता, पुस्तक खरीदना, छात्रवृत्ति आदि। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को भी राष्ट्रीय प्रतिभावान विद्यालय (N.T.S.) जैसी संस्थाओं से लाभ तथा छात्रवृत्ति के लिए मार्गदर्शन किया जाना चाहिए।

(8) सामान्य शिक्षा से पूर्व तैयारी हेतु प्रशिक्षण

शिक्षा संस्थओं में औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने से पहले बाधित बच्चों को कुछ तैयारी करवानी चाहिए। यह तैयारी किसी विशिष्ट शिक्षा संस्था, विशिष्ट 'बच्चों के शिक्षा केन्द्र' (ECEC), बालवाड़ी, आंगनवाड़ी अथवा किसी प्राथमिक स्कूल की कक्षाओं के माध्यम से की जा सकती है। इसमें प्रवेश के लिए अध्यापक को बच्चे का सामान्य परीक्षण करना चाहिए, इसके पश्चात बच्चों की वैयक्तिक परीक्षा, माता–पिता का साक्षात्कार आदि करना चाहिए। इस प्रकार के परीक्षणों से बाधित बच्चे के बारे में अध्यापक को यह जानकारी प्राप्त होती है कि बच्चे कार्य करने में किस सीमा तक सक्षम है तथा वह कितना काम कर सकता है और क्या–क्या काम कर सकता है। उसको कितना ज्ञान है। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे को संसाधन युक्त कक्षा–कक्ष में उनकी आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण/शिक्षण दिया जाता है। मानसिक एवं शारीरिक रूप से बाधित बच्चों को सामान्य समुदायों के साथ समन्वित करने और उन्हे साहस तथा आत्म विश्वास से जीवन का सामना करने के योग्य बनाने का लक्ष्य होना चाहिए।

Downloaded From www.dietmathura.org

(9) संसाधन युक्त अध्यापक की सहायता

प्रत्येक शिक्षा संस्थान के बाधित बच्चों की सहायता हेतु एक संसाधन युक्त अध्यापक को रखना चाहिए। यह पूर्णकालिक एवं अंशकालिक दोनों प्रवृत्तियों का हो सकता है। ये ससांधन युक्त अध्यापक संसाधनयुक्त सामग्री की सहायता से, संसांधन कक्षों के माध्यम से शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकता वाले बाधित बच्चों को अपनी सेवायें दे सकता है। ये बाधित बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं की शिक्षण प्रणाली में निपुण होते हैं। संसाधन युक्त शिक्षाविद सामान्य अध्यापको को इस सम्बन्ध में सलाह भी दे सकते हैं।

(10) सहायक सामग्री तथा उपकरण

ऐसे विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे जो पुराने अनुदेशन सामग्री, परम्परानुसार साधन, शिक्षण सहायता तथा ससांधन उपकरणों का लाभ ग्रहण नहीं कर पाये हैं उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए ससांधन कक्ष के उपकरण तथा सुविधाएं का लाभ विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को मिलना चाहिए। ऐसे बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप जैसे गम्भीर रूप से दृष्टि बाधित बच्चों के लिए ब्रेललिपि सामग्री, मोटे छापे की पठन सामग्री अथवा पठन सामग्री तथा श्रवण बाधितों के लिए श्रवणयन्त्र तथा अन्य सहायक सामग्री वाणी में सहायक यन्त्र, मानसिक मन्दित बच्चों के लिए खेल, खिलौने, तथा अधिगम असमर्थियो के लिए उनकी बाधिता के अनुरूप सामग्री विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं में उपलब्ध होनें चाहिए।

प्रशिक्षु पुनरावृत्ति निम्नलिखित बिन्दुओं से कराएं–

- सामान्य बच्चे (90– 110) बुद्धिलब्धि वाले बच्चे होते हैं। ये सामान्य रूप शारीरिक एवं मानसिक कार्यों को करने में सक्षम होते हैं।
- जो बच्चे सामान्य बच्चों से विशिष्ट होते हैं, चाहे वह शारीरिक हो, मानसिक हो या सामाजिक हो, ऐसे बच्चे विशिष्ट बच्चे कहलाते हैं।
- विशिष्ट बच्चों की आवश्यकताएं भी विशिष्ट होती हैं।
- ये दुर्लभ लक्षण या गुणों वाले बच्चे होते हैं।
- इनकी शिक्षा व्यवस्था सामान्य बच्चों की शिक्षा व्यवस्था से अलग होती हैं।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य कक्षाओं में शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई का अनुभव होता है और यह सीख नहीं पाते हैं।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के लिए विशेष प्रकार की शिक्षा व्यवस्था करनी पड़ती है।
- इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था में सर्वप्रथम उनका पहचान व आकलन करना, सेवाओं का स्थापन, वैयक्तिकता पर बल, अधिगम पर बल, विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं का स्वरूप, समन्वित शिक्षा का स्थापन, भत्तों का प्रावधान, सामान्य शिक्षा से पूर्व तैयारी हेतु प्रशिक्षण, संसांधन युक्त अध्यापक की सहायता, तथा सहायक सामग्री एवं उपकरण भी उपलब्ध कराना चाहिए।

Downloaded From www.dietmathura.org

अभ्यास-प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को कितने प्रकार से विभक्त किया जा सकता है–

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) पाँच

2. 'विशिष्ट' ऐसा व्यक्ति है जिसकी शारीरिक, मानसिक, बुद्धि, इन्द्रियाँ, मांसपेशीयों की क्षमताएं अनोखी हो– यह कथन है–

(क) क्रो एण्ड क्रो (ख) हीबर्ड

(ग) क्रिक (घ) हेवेट एण्उ फोरनेस

3. मन्द बाधित बच्चे का डेसीबल स्तर होता है–

(क) 35–51 (ख) 55–69

(ग) 72–89 (घ) 92–100

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. सामान्य बच्चे किसे कहते हैं?
2. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे किसे कहते हैं?
3. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की पाँच लक्षण बताइए।

लघुउत्तरीय– प्रश्न

4. प्रतिभाशाली बच्चे की बुद्धिलब्धि (I Q) कितनी होती है?
5. प्रतिभाशली बच्चे की पाँच विशेषताएं बताइए ?
6. सामान्य बच्चे की बुद्धिलब्धि कितनी होती है?
7. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों में कौन–कौन से गुण पाए जाते हैं?

दीर्ध–उत्तरीय प्रश्न

19. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की सीखने–सिखाने की व्यवस्था कैसे करेंगे स्पष्ट करिए ?
20. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य शिक्षण ग्रहण करने में क्यों कठिनाई होती है? स्पष्ट करिए ?
21. विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा व्यवस्था को दर्क्षित करने वाला चार्ट तैयार कीजिए।

Downloaded From www.dietmathura.org

समावेशी बच्चों हेतु निर्देशन एवं परामर्श

प्रत्येक बालक का यह अधिकार है कि वह अपना विकास प्राप्त क्षमताओं के अनुसार कर सके। शिक्षा का उद्देश्य सभी बालकों का सर्वांगीण विकास करना है। विशिष्ट आवश्यकता वाले बालक, अपवंचित बालकों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए निर्देशन और परामर्श की आवश्यकता होती है।

प्रमुख शिक्षण बिन्दु

- निर्देशन एवं परामर्श का अर्थ
- उद्देश्य
- प्रकार
- विधियाँ
- आवश्यकता एवं क्षेत्र

निर्देशन का अर्थ

निर्देशन का तात्पर्य एक ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें एक व्यक्ति को इस प्रकार सहायता प्रदान की जाती है कि वह अपनी जन्मजात तथा अर्जित क्षमताओं को समझते हुए उनका उपयोग अपनी समस्याओं को स्वयं हल करने में कर सके। इस प्रकार निर्देशन में दो व्यक्ति होते हैं। एक वह जिसको निर्देशन प्रदान किया जाता है तथा दूसरा वह जो निर्देशन करता है। संक्षेप में निर्देशन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका अभिप्रायः व्यक्ति को विशेष प्रकार की सहायता पहुँचाना है। जिससे वह स्वयं अपना जीवन लक्ष्य निश्चत कर सके, अपनी क्षमताओं के अनुसार शिक्षा तथा व्यवसाय प्राप्त करते हुए अपनी जीवन की समस्याओं को सुलझा सके, जिससे अपनी उन्नति के साथ समाज और राष्ट्र के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सकें।

निर्देशन की परिभाषा

- **जोन्स के अनुसार–** ''निर्देशन एक प्रकार की व्यक्तिगत सहायता है जो एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को इस लिए प्रदान करता है कि वह अपने जीवन लक्ष्य निर्धारित कर सके, जीवन में समायोजन स्थापित कर सके एवं लक्ष्य पूर्ति से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझा सके।''
- **मॉरिस के अनुसार–** ''निर्देशन का तात्पर्य व्यक्ति को सहायता प्रदान करने वाली उस प्रक्रिया से जिसके द्वारा वह स्वयं अपनी क्षमताओं का पता लगाने तथा उन्हें विकसित करने का प्रयास करता है। जिससे उसका व्यक्तिगत जीवन सुखी और सामाजिक जीवन उपयोगी हो सके।''
- **स्किनर के अनुसार–** '' निर्देशन युवक को सहायता देने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा वह स्वयं के साथ, दूसरों के साथ और परिस्थितियों के साथ समायोजन करना सीखता है।''

निर्देशन का उद्देश्य

निर्देशन एक सोद्देश्य प्रक्रिया है ध्यान पूर्वक अवलोकन करने पर निर्देशन के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य हैं।

Downloaded From www.dietmathura.org

निर्देशन के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए चाइसोम लिखते हैं, ''निर्देशन का उद्देश्य उन सजीव तथा क्रियात्मक निहित शक्तियों का विकास है, जिनकी सहायता से वह जीवन की समस्याओं को सुगमता तथा सामंजस्यपूर्ण ढंग से जीवन पर्यन्त हल करने योग्य बनाये।''

- **स्किनर के शब्दों में–** ''वर्तमान शिक्षा में निर्देशन का मुख्य उद्देश्य है– प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमताओं, रुचियों और अवसरों के अनुकूल चुनाव करने में सहायता देना।''
- निर्देशन का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति का बहुमुखी विकास करना है। अन्य शब्दों में, बालक की निहित शक्तियों योग्यताओं तथा कुशलताओं को ज्ञात कर उन्हें अधिकतम उपयोगी कार्यों में लगाना है।
- निर्देशन का उद्देश्य छात्र को इस योग्य बनाना है कि वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें।
- **शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन के मैनुअल के अनुसार–** ''व्यक्ति को अपनी शिक्षा, व्यवसाय, मनोरंजन और समाज सेवा से सम्बन्धित कार्यों का चुनाव करने, उनके तैयारी करने, उनमें प्रवेश करने और उनमें उन्नति करने में सहायता देना है।''
- शिक्षा आयोग ने भी निर्देशन के उद्देश्यों का सम्बन्ध सामंजस्य और विकास दोनों से बताया है। निर्देशन छात्र को शिक्षा–संस्था और परिवार की परिस्थितियों से यथा सम्भव सर्वोत्तम सामंजस्य करने में सहायता देता है।

निर्देशन के प्रकार

- व्यक्तिगत निर्देशन
- शैक्षिक निर्देशन
- स्वास्थ्य निर्देशन
- सामाजिक निर्देशन
- व्यावसायिक निर्देशन

व्यक्तिगत निर्देशन

यह निर्देशन व्यक्तिगत कठिनाइयों से सम्बन्धित होता है। इसमें निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है–

- छात्रों को उनकी समस्याओं का ज्ञान कराना और उन्हें समुचित निर्देशन देना।
- छात्रों के सन्तुलित विकास में सहायता करना।
- छात्रों को अध्ययन के सम्बन्ध में मार्गदर्शन करना।
- छात्रों को वातावरण से सामंजस्य स्थापित करने में व्यक्तिगत रूप से सहायता करना।

www.dietmathura.org

Downloaded From www.dietmathura.org

शैक्षिक निर्देशन

- जोन्स के अनुसार शैक्षिक निर्देशन का अर्थ उस व्यक्तिगत सहायता से, जो छात्रों को इस कारण से प्रदान की जाती है कि वे अपने लिए उपयुक्त विद्यालय, पाठ्यक्रम, पाठ्य विषय एवं विद्यालयी जीवन का चयन कर सकें और उनसे समायोजन कर सकें।
- शैक्षिक निर्देशन का सम्बन्ध शिक्षा और अध्ययन से होता है इसमें निम्नलिखित बातें सम्मिलित होती हैं।
- पाठ्य विषयों का चयन करते समय छात्रों का मार्गदर्शन करना।
- विद्यालय में प्रवेश के समय छात्रों को आवश्यक और उचित निर्देशन देना।
- छात्रों को भावी योजना बनानें में सहायता देना और अन्य उच्च शिक्षा संस्थाओं के सम्बन्ध में सूचना देना।
- छात्रों को ज्ञानार्जन तथा अध्ययन की विधियाँ बताना।
- छात्रों की परिवारिक पृष्ठभूमि, शैक्षिक उपलब्धि तथा रुचियों और क्षमताओं की जानकारी प्राप्त कर उन्हें अवश्यकता तथा परिस्थिति के अनुसार सहायता या मार्गदर्शन देना।

स्वास्थ्य निर्देशन

स्वास्थ्य निर्देशन का सम्बन्ध विशेष रूप से छात्र की निम्नलिखित स्वास्थ्य सुरक्षा सम्बन्धित बातों से है–

- छात्रों को स्वस्थ जीवन के महत्व के विषय में बताना।
- छात्रों को उत्तम स्वस्थ आदतों के विषय में जानकारी देना।
- स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाली आदतों को छोड़ने के विषय में उचित परामर्श देना।
- छात्रों को प्राथमिक उपचार के विषय में जानकारी कराना और उसका प्रशिक्षण देना।
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों को विशेष सूचना प्रदान करना।
- छात्रों को काम–शिक्षा की स्तरानुकूल वांछित जानकारी प्रदान करना।

सामाजिक निर्देशन

इसमें छात्रों को सामाजिक सम्बन्धों का निर्देशन दिया जाता है। इस निर्देशन में निम्नलिखित बातें होती है।

- छात्रों को सामाजिक समायोजन के विषय में आवश्यक परामर्श देना।

Downloaded From www.dietmathura.org

- छात्रों को विभिन्न सामाजिक व्यवहारों के विषय में विभिन्न सूचनाएं प्रदान करना।
- छात्रों को विद्यालय के सामाजिक जीवन का ज्ञान कराना।
- विद्यालय में होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन को संगठित करने में छात्रों की सहायता करना।

व्यावसायिक निर्देशन

व्यावसायिक निर्देशन के अन्तर्गत छात्रों को वे सुझाव दिए जाते हैं, जिन्हें ग्रहण करके वे अपने भविष्य के लिए व्यवसाय का चुनाव करते हैं। इस विषय में निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाता है।

- किसी छात्र व्यक्ति विशेष को ऐसे सहायता देना की वह अपने लिए उचित व्यवसाय का चुनाव ठीक प्रकार से कर सके।
- छात्रों को विभिन्न व्यवसायों के विषय में जानकारी कराना।
- विभिन्न व्यवसायों के गुण एवं दोषों की सूचना प्रदान करना।
- छात्रों की रूचियों, योग्यताओं तथा क्षमताओं से सम्बन्धित व्यवसायों की जानकारी प्राप्त कराना और उसके आधार पर छात्रों को निर्देशन देना।
- छात्रों को इस प्रकार की सहायता प्रदान करना, जिससे वे अपनी योग्यताओं और कुशलताओं का ठीक प्रकार से मूल्यांकन कर सकें और इस मूल्यांकन के आधार पर वे अपने लिए व्यवसाय का चुनाव कर सकें।
- छात्रों को विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित प्रशिक्षण केन्द्रों की सूचना प्रदान करना।

निर्देशन की विधियाँ

छात्रों को निर्देशन प्रदान करने के लिए दो विधियाँ प्रयोग की जाती हैं–

- वैयक्तिक सम्पर्क विधि
- सामूहिक विधि

निर्देशन की आवश्यकता एवं क्षेत्र

प्रत्येक समाज व राष्ट्र यह अपेक्षा करता है कि उसके नागरिकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास हो और वे अपनी योग्यता व क्षमता के अनुकूल अपना विकास कर राष्ट्र के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सकें। यह तभी सम्भव हो सकता है जब उन्हें सही निर्देशन प्राप्त हो। वर्तमान समय में औद्योगीकरण, नगरीकरण, जनसंख्या विस्फोट के परिणाम स्वरूप समाज में जो परिवर्तन हुए उनके कारण आज निर्देशन के आवश्यकता और भी बढ़ गयी है। और यह सत्य है कि जैसे–जैसे समाज की जटिलता बढती जायेगी वैसे–वैसे निर्देशन की आवश्यकता बढ़ती जाएगी।

निर्देशन की आवश्यकता को निम्नलिखित तीन दृष्टिकोणों से प्रस्तुत कर सकते हैं–

www.dietmathura.org

Downloaded From www.dietmathura.org

- सामाजिक–आर्थिक दृष्टिकोण से आवश्यकता।
- मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से आवश्यकता
- शैक्षिक दृष्टिकोण से आवश्यकता।

सामाजिक–आर्थिक दृष्टिकोण से निर्देशन की आवश्यकता

सामाजिक आर्थिक दृष्टिकोण से निर्देशन की आवश्यकता को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है–

- औद्योगीकरण तथा नगरीकरण
- संयुक्त परिवार प्रणाली का विघटन
- पाश्चात सभ्यता का प्रभाव
- परिवर्तित सामाजिक मूल्य
- नैतिक तथा धार्मिक परिवर्तन
- जनसंख्या वृद्धि
- व्यक्तिगत सर्म्पक का अभाव
- व्यवसायों की बहुलता
- मनोनुकूल व्यवसाय का न मिल पाना

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से निर्देशन की आवश्यकता

- वैयक्तिक विभिन्नता को समझना
- समायोजन
- संवेगात्मक समस्याएं
- व्यक्तित्व का विकास
- खाली समय का सदुपयोग

शैक्षिक दृष्टिकोण से निर्देशन की आवश्यकता

- पाठ्यक्रम का चयन
- अपव्यय एवं अवरोधन रोकने के लिए
- बढ़ती छात्र संख्या
- अनुशासन हीनता की समस्या
- विद्यालय में समायोजन की समस्या

Downloaded From www.dietmathura.org

परामर्श

निर्देशन एक व्यापक प्रक्रिया है परन्तु परामर्श इसका एक महत्वपूर्ण अंग है। परामर्श के बिना निर्देशन का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकता। परामर्श शब्द दो व्यक्तियों से सम्बन्ध रखता है– परामर्शदाता तथा परामर्श प्रार्थी या परामर्श चाहने वाला।

प्रमुख शिक्षण बिन्दु

- परामर्श का अर्थ
- उद्देश्य
- प्रकार
- विधियाँ
- आवश्यकता एवं क्षेत्र

परामर्श चाहने वाले की कुछ समस्याएं होती हैं, जिनका समाधान वह अकेले नहीं कर सकता। इन समस्याओं के समाधान के लिए उसे किसी दूसरे व्यक्ति के सुझाव की आवश्यकता होती है और यह सुझाव ही परामर्श कहलाते हैं, जो कि परामर्शदाता द्वारा दिये जाते हैं। अन्य शब्दों में परामर्शदाता परामर्श चाहने वाले व्यक्ति की समस्या या कठिनाई को समझने का प्रयास करता है तथा उससे विचारों का अदान–प्रदान करके उसकी समस्या का समाधान करने में सहयता प्रदान करता है। इस प्रकार की सहायता परामर्श कहलाती है।

परामर्श की परिभाषा

बरनार्ड तथा फूलमर के अनुसार– ''बुनियादी तौर पर परामर्श के अन्तर्गत व्यक्ति को समझना और उसके साथ कार्य करना होता है जिससे उसकी आवश्यकताओं, अभिप्रेरणाओं और क्षमताओं की जानकारी हो और फिर उसे उनके महत्व को जानने में सहायता दी जाए।''

डॉ0 सीता राम जायसवाल के अनुसार– ''निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि परामर्श का मूल तत्व दो व्यक्तियों के बीच ऐसा सम्पर्क है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को स्वयं को समझने में सहायता देता है।''

मार्यस के अनुसार– ''परामर्श का तात्पर्य दो व्यक्तिों के सम्पर्क से है, जिसमें एक को किसी प्रकार की दूसरे व्यक्ति द्वारा सहायता प्रदान की जाती है।''

राबिन्सन के अनुसार– ''परामर्श शब्द दो व्यक्तियों की सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है, जिनमें एक व्यक्ति को उसके स्वयं के एवं वातावरण के मध्य प्रभावशाली समायोजन प्राप्त करने में सहायता की जाती है।''

परामर्श के उद्देश्य

परामर्श के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- **रूथ स्ट्रैग के अनुसार–''**परामर्श का उद्देश्य आत्मपरिचय या आत्मबोध है।''
- **डन्समूर के अनुसार–''**परामर्श का उद्देश्य छात्र को अपनी कठिनाइयों को हल करने की योजना बनाने में सहायता देना है।''
- **रॉबर्टस के अनुसार–''** परामर्श का उद्देश्य परामर्श लेने वाले को अपनी शैक्षिक, व्यावसायिक और वैयक्तिक समस्यों को समझने में सहायता देना है।''

Downloaded From www.dietmathura.org

- **जे0पी0अग्रवाल के शब्दों में–** '' परामर्श का उद्देश्य है छात्र को अपनी विशिष्ट योग्यताओं और उचित दृष्टिकोणों का विकास करने में सहायता देना।''
- छात्र को अपनी योग्यताओं रूचियों तथा कुशलताओं को समझकर अपनी समस्याओं का समाधान करना।
- छात्रों को अपनी समस्याओं का समाधान करने में इस प्रकार सहायता प्रदान करना कि उसमें बिना किसी की सहायता लिए समस्याओं का समाधान करने की योग्यता का विकास हो जाए।

परामर्श के प्रकार

- **नैदानिक परामर्श–** नैदानिक परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य कार्य सम्बन्धी असमायोजनों से है। इसमें साधारण कार्य सम्बन्धी असमायोजन का निदान एवं उपचार किया जाता है।
- **मनोवैज्ञानिक परामर्श–** परामर्शदाता विभिन्न मनोवैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कर परामर्श प्रार्थी की कठिनाइयों को समझने का प्रयास करता है और उसकी मानसिक समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है।
- **शैक्षिक परामर्श–** शैक्षिक परामर्श छात्र को अपनी शिक्षा एवं अध्ययन में सफलता प्राप्त करने तथा पाठ्यक्रमों एवं विषयों का उचित चुनाव करने के लिए दिया जाता है।
- **सामाजिक परामर्श**– इसका उद्देश्य परामर्श प्रार्थी को सामाजिक कुशलताओं का विकास करने में सहायता देना है।
- **व्यावसायिक परामर्श–** व्यावसायिक परामर्श व्यक्ति की उन समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है, जो किसी व्यवसाय के चुनाव या उसके लिए तैयारी करते समय उसके सम्मुख आती हैं।

परामर्श की विधियाँ

छात्रों को परामर्श प्रदान करने के लिए दो विधियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं–

- व्यक्तिगत परामर्श
- समूह परामर्श

परामर्श की आवश्यकता एवं क्षेत्र

छात्रों को अपना अधिकतम विकास करने में सहायता देने के लिए परामर्श आवश्यक है–

- छात्रों की वर्तमान समस्याओं को हल करने में सहायता देने के लिए।
- विशेष योग्यताओं तथा उचित दृष्टिकोण को प्रोत्साहित एवं विकसित करने के लिए।
- शैक्षिक तथा व्यावसयिक चयन की योजना बनाने में छात्र की सहायता करने के लिए।
- छात्रों को अपने उत्तरदायित्व को समझने में सहायता देना।
- छात्रों को सामाजिक और संवेगात्मक सामंजस्य स्थापित करने में सहायता करने के लिए।

Downloaded From www.dietmathura.org

परामर्श में सहयोग देने वाले विभाग/संस्थायें

1. मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 इलाहाबाद

मनोविज्ञानशाला उ0 प्र0 इलाहाबाद की स्थापना 'आचार्य नरेन्द्र देव' समिति की संस्तुति के आधार पर लाउदर रोड, इलाहाबाद में सन् 1947 ई0 में की गई। वर्तमान में यह राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद उ0प्र0 लखनऊ की 'ब्यूरो ऑफ साइकोलॉजी' नामक इकाई के रूप में एक विशिष्ट संस्था है। मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 संस्था का अध्यक्ष पदेन 'निदेशक' कहलाता है। इसमें वरिष्ठ मनोवैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक के भी पद सृजित किये गये हैं।

प्रमुख शिक्षण बिन्दु

- मनोविज्ञानशाला उ0प्र0, की संकल्पना
- मनोविज्ञानशाला के प्रमुख कार्य
- मण्डलीय मनोविज्ञान केन्द्र
- जिला चिकित्सालय
- पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण तंत्र
- समुदाय एवं विद्यालय की सहयोगी समितियाँ
- सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन

इस संस्था का मुख्य उद्देश्य है प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के शिक्षकों को शिक्षण, निर्देशन एवं परामर्श प्रदान करने हेतु, मनोवैज्ञानिक रूप से सक्षम बनाने हेतु प्रशिक्षण देना तथा छात्रों को व्यावसायिक व वैयक्तिक निर्देशन प्रदान करना।

मनोविज्ञानशाला, उ0 प्र0 के प्रमुख कार्य

इस संस्था के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(1) निदेशन

- शैक्षिक निर्देशन
- वैयक्तिक निर्देशन
- बाल निर्देशन
- व्यावसायिक निर्देशन

(2) प्रशिक्षण

निर्देशन सेवाओं के लिए उपयुक्त मनोवैज्ञानिक तैयार हो सकें, इसके लिए मनोविज्ञानशाला में एक सत्रीय कोर्स का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसे ***'डिप्लोमा इन गाइडेन्स साइकोलॉजी'*** कहा जाता है।

(3) सेवाकालीन प्रशिक्षण

(क) शिक्षा विभाग के अधिकारियों को इस संस्था द्वारा एक–एक सप्ताह का प्रशिक्षण दिया जाता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

(ख) समय–समय पर प्रदेश तथा अन्य प्रदेशों के विद्यालयों, महाविद्यालयों, शिक्षण संस्थाओं के शिक्षकों, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थानों के प्रशिक्षकों, प्रवक्ताओं आदि को मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण दिया जाता है।

(4) चयन कार्य– मनोविज्ञानशाला राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार के विभिन्न विभागों के चयन आदि प्रक्रियामें आवश्यकतानुसार सहायता प्रदान करती है। जैसे– पुलिस विभाग में उप–निरीक्षक, कांस्टेबिल, ड्राइवर आदि के चयन में सहयोग प्रदान करती है। यह स्पोर्ट्स कॉलेज लखनऊ, गोरखपुर, फैजाबाद आदि में प्रवेश लेने हेतु अभ्यर्थियों का सामान्य ज्ञान व खेल अभिरुचि का परीक्षण करती है तत्पश्चात् संस्तुति करती है।

(5) राष्ट्रीय प्रतिभा खोज परीक्षा का आयोजन– यह संस्था राष्ट्रीय प्रतिभा खोज परीक्षा के आयोजन एवं संचालन में प्रादेशिक स्तर पर नोडल एजेन्सी के रूप में कार्य करती है।

(6) शोध कार्य/परियोजना– मनोविज्ञानशाला मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के निर्माण, अनुशीलन तथा मानकीकरण का कार्य करती है– जैसे थीमेटिक एयरसेप्शन टेस्ट (T.A.T.) का भारतीय स्थिति में अनुकूलन किया गया है। कुछ विदेशी अशाब्दिक परीक्षणों के मानक तैयार किए गए है।

(7) प्रकाशन कार्य– इस संस्था से 'व्यावसायिक सूचना' 'आपका बालक' जैसे त्रैमासिक समाचार पत्र प्रकाशित होते रहते हैं एवं समय–समय पर मनोवैज्ञानिक समस्याओं से युक्त 'बलाघात' 'उत्कर्ष' आदि पुस्तकें भी प्रकाशित की जाती हैं। यहाँ से अनेक शोध एवं निष्कर्ष भी प्रकाशित किए जाते हैं।

(8) अनुवर्ती कार्य– छात्रों को सामूहिक तथा वैयक्तिक रूप से दिये गये निर्देशन का अनुवर्ती अध्ययन भी किया जाता है।

अन्य कार्य

छात्रों को शिक्षा एवं मनोविज्ञान से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण विषयों पर व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना, रुचि परीक्षण करना, मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान करना आदि इस संस्था के अन्य प्रमुख कार्य हैं।

चर्चा करें– मनोविज्ञानशाला के प्रमुख कार्य कौन–कौन से हैं?

मण्डलीय मनोविज्ञान केन्द्र

मनोविज्ञानशाला उ0 प्र0 इलाहाबाद ने अपनी सेवाओं के विस्तार करने एवं उन्हें सर्वसुलभ बनाने हेतु मण्डल स्तर पर 'मण्डलीय मनोविज्ञान केन्द्र' की स्थापना की है। इसके प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(क) यह मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 इलाहाबाद द्वारा किये जा रहे कार्यों की मण्डलीय स्तर पर सेवा प्रदान करता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

(ख) छात्रों को व्यवसाय चुनने में परामर्श देता है।

(ग) विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को परामर्श देता है।

(घ) छात्रों की मनोवैज्ञानिक समस्याओं के निवारण हेतु परामर्श देता है।

चर्चा करें– मण्डलीय मनोविज्ञान केन्द्र का योगदान क्या–क्या है?

जिला चिकित्सालय

सम्पूर्ण प्रदेश भर में जिला चिकित्सालयों में मुख्य चिकित्साधिकारी के नेतृत्व में एक 'विशेषज्ञ डॉक्टरों' की समिति होती है जो विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (विकलांगों) के लिए विकलांगता आदि का परीक्षण करके सेवाओं में आरक्षण का लाभ प्रदान कराते हैं। यह विशेषज्ञ डॉक्टरों की समिति विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के लिए समुचित उपकरण जैसे– चश्मा आदि प्रदान करने की संस्तुति करती है एवं उन्हें तथा अन्य जनों को भी व्यावसायिक परामर्श देती है।

चर्चा करें– *जिला चिकित्सालय किस प्रकार विशेष बच्चों की सहायता करता है?*

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान में प्रशिक्षित डायट मेंटर

बालकों को परामर्श एवं निर्देशन प्रदान करने हेतु प्रत्येक जिले में 'जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान' में मनोविज्ञान विभाग होते हैं जो छात्रों व शिक्षकों को मनोवैज्ञानिक परामर्श देने का कार्य करते हैं। यद्यपि इस संस्थान का मुख्य कार्य तो अध्यापकों को प्रशिक्षण देना है लेकिन यहाँ उन्हें शिक्षण हेतु मनोवैज्ञानिक विधियों का भी प्रशिक्षण दिया जाता हैं।

पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण तन्त्र

निर्देशन कार्यकर्त्ता के समूहों में यदि हम ध्यान से देखें तो ज्ञात होता है कि विद्यालय के सामाजिक कार्यकर्त्ता का स्थान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। विद्यालय का सामाजिक कार्यकर्त्ता बालक के परिवार एवं विद्यालय के मध्य एक सेतु का कार्य करता है। जैसा कि हम जानते हैं कि बालक की समस्याओं के लिए उनका पारिवारिक एवं समाजिक वातावरण, साथीगण एवं मित्रगण आदि सभी उत्तरदायी होते हैं। विद्यालय के परामर्शदाता को बालक के घर की स्थिति, माता पिता का व्यवहार, उसके आस पास के परिवेश के बारे में जानकारी देने का कार्य विद्यालय का सामाजिक कार्यकर्त्ता ही करता है।

बालकों के निर्देशन एवं परामर्श का कार्य एकमात्र विद्यालय के द्वारा ही नहीं सम्भव है बल्कि अन्य बहुत से अभिकरण इसमे अपेक्षित सहयोग प्रदान करते हैं। जैसे– चिकित्सक, मनोचिकित्सक, एवं बालक से सम्बन्धित अन्य लोग।

Downloaded From www.dietmathura.org

चर्चा करें– *बालक के निर्देशन एवं परामर्श में विद्यालय के अतिरिक्त अन्य कौन–से अभिकरण अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं?*

समुदाय एवं विद्यालय की सहयोगी समितियाँ

शिक्षा संस्थाएं केवल ज्ञान प्रदान करने का ही कार्य नहीं करती बल्कि वहाँ वे शिक्षार्थी को जीवन जीने की कला भी सिखाती हैं, उन्हें सम–विषम परिस्थितियों से डटकर मुकाबला करने आदि का भी ज्ञान प्रदान करती हैं। विद्यालय में निर्देशक की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। विद्यालय में छात्र जिन कठिनाइयों एवं समस्याओं का अनुभव करता है एवं उसकी शैक्षिक प्रगति में जो आन्तरिक एवं बाह्य बाधाएँ हैं उनके समुचित निराकरण के लिए विद्यालय में परामर्श सेवा का विधान अवश्य होना चाहिए। सामान्यतः विद्यालय परामर्श सेवा संगठन के 3 प्रारूप माने जाते हैं–

1. रेखा संगठन
2. कर्मचारी संगठन
3. रेखा कर्मचारी मिश्रित संगठन

1. रेखा संगठन

छोटे विद्यालय के लिए संगठन सिद्धान्त की दृष्टि से रेखा संगठन उपयुक्त माना जाता है। यहाँ विद्यालयों का अधीक्षक, प्रधानाचार्य, अध्यापकगण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इस प्रकार के संगठन में अधिकार क्रम से कर्मचारियों में ऊपर से नीचे तक एक सीधा स्तरीकरण होता है। उदाहरण स्वरूप– सबसे ऊपर मुख्य प्रशासकीय अधिकारी उसके बादे उसके सहायक अधिकारी और उन अधिकारियों के निरीक्षण में कार्य करने वाले अधीनस्थ कर्मचारी होते हैं। विद्यालयों का अधीक्षक इस संगठन में उत्तरदायित्व एवं अधिकार की दृष्टि से सबसे ऊपर होता है। इसके बाद अधिकार एवं कर्त्तव्यक्रम की दृष्टि से प्रधानाचार्य, अध्यापकगण एवं छात्रों का क्रम आता है। यहाँ जो मुख्य प्रशासनिक अधिकारी होता है वही सर्वोपरि होता है। वह अन्य अधिकारियों को कार्य सौंपता है एवं उनके पूरे होने की जाँच करता है। छोटे विद्यालय के परामर्श संगठन में परामर्श समिति का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। यह विद्यालय के निर्देशन कार्यक्रम की योजना तैयार करने संगठित करने आदि का कार्य करती है।

कर्मचारी संगठन

इसमें मुख्य प्रशासकीय अधिकार कार्यक्षेत्रों के शीर्ष अधिकारी को सौंपे जाते हैं। इस संगठन से यह लाभ है कि प्रत्येक वर्ग के कर्मचारी अपने अपने कार्यों में विशेष दक्षता प्राप्त कर लेते हैं। रेखा संगठन एवं कर्मचारी संगठन दोनों में ही प्रबन्ध की दृष्टि से नियंत्रण प्रशासकीय अधिकारी के ही हाथ में होता है। विशेषज्ञ यद्यपि प्रशासनिक अधिकारी के नियंत्रण में कार्य करते हैं किन्तु परामर्श व्यवस्था की प्रक्रिया एवं नीति निर्धारण में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

Downloaded From www.dietmathura.org

रेखा कर्मचारी मिश्रित संगठन

बड़े आकार के विद्यालयों में 'रेखा कर्मचारी मिश्रित संगठन' की आवश्यकता होती है। रेखा एवं कर्मचारी संगठनों के मिश्रित रूप को 'रेखा कर्मचारी मिश्रित संगठन' कहते हैं। यहाँ विद्यालय अधीक्षक को सलाह प्रदान करने के उद्देश्य से सहायक अधीक्षक होते हैं। ये सहायक अधीक्षक 4 हो सकते हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. प्रशासकीय शोधकार्य के लिए छात्रों को सेवायें देने वाले सहायक अधीक्षक
2. विशिष्ट सेवाओं के लिए सहायक अधीक्षक
3. अध्यापन सहायक अधीक्षक
4. विद्यालयों के कर्मचारियों से सम्बन्धित सहायक अधीक्षक

ये चारों ही सहायक अधीक्षक परस्पर सहयोगपूर्ण ढंग से कार्य करते हैं एवं विद्यालय अधीक्षक को परामर्श योजना सम्बंधी सुझाव भेजते हैं। इस संगठन में उपर्युक्त दोनों, रेखा एवं कर्मचारी संगठन पद्धति के लाभ विद्यामान रहते हैं।

रेखा के क्रम से स्वास्थ्य निदेशक के अधीन चिकित्सक, मनोचिकित्सक एवं नर्सों की सेवाएँ आती हैं। छात्रों के लिए आवश्यक सेवा कर्मचारियों में मनोवैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्त्ता अथवा समाज–सेवक, उपस्थिति अधिकारी तथा विद्यालय दर्शन के लिए आये हुए अध्यापक सम्मिलित होते हैं। ये सभी लोग कर्मचारी सेवाओं के सहायक अधीक्षक के अन्तर्गत कार्य करते हैं। प्रधानाध्यापकों के अधीन अध्यापकगण, निर्देशन विशेषज्ञ आते हैं। इसी प्रकार अन्य कर्मचारीगण परस्पर मिल–जुल कर कार्य करते हैं, अधिकार एवं कर्तव्य की दृष्टि से किसी का भी स्थान उच्च या निम्न नहीं होता है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि एक बड़े आकार के विद्यालय का निर्देशन–संगठन उपर्युक्त प्रकार से किया जा सकता है। वैसे प्रत्येक विद्यालय की अपनी आवश्यकताएँ एवं सीमायें होती हैं जिसे वह ध्यान में रखते हुए उपर्युक्त योजनाओं में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है।

कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या के अनुरूप भिन्न–भिन्न ढंग से परामर्श कार्य का संगठन किया जाता है।

सरकारी एवं गैरसरकारी संगठन

उत्तर प्रदेश की प्राथमिक शिक्षा प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रही है। यहाँ पर्याप्त समय से शिक्षा स्थानीय निकायों के अधीन रही है। ग्रामीण क्षेत्रों की शिक्षा व्यवस्था पर जिला परिषदों का नियंत्रण रहा। 1972 में 'उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा अधिनियम' के अस्तित्व में आने के बाद प्राथमिक विद्यालयों को इनके अधीन रखा गया। उत्तर प्रदेश शासन द्वारा संविधान के 73वें संशोधन की

Downloaded From www.dietmathura.org

मूलभावना को दृष्टिगत रखते हुए 01 जुलाई 1999 को ग्राम पंचायतों को प्राथमिक विद्यालयों, अनौपचारिक शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा के कार्य स्थानान्तरित करने का निर्णय लिया गया। पंचायत राज अधिनियम के अन्तर्गत 'ग्राम शिक्षा समिति' को प्रभावी बनाया गया। इसके माध्यम से सामुदायिक सहभागिता सहयोग तथा समन्वय पर बल प्रदान किया गया।

प्रारम्भिक शिक्षा में पंचायतों तथा स्थानीय निकायों की भूमिका

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षा के प्रबन्ध के सन्दर्भ में आम जनता को सम्मिलित करने को पहले से महत्ता दी गई। इसमें गैर सरकारी संगठनों का सहयोग एवं स्वैच्छिक प्रयास भी सम्मिलित हैं। लोगों की भागीदारी का अर्थ है– सभी स्तरों पर शैक्षिक प्रक्रियाओं के साथ गैर सरकारी संगठनों तथा स्वैच्छिक संगठनों से भी अधिक माता–पिता, विकासात्मक एजेन्सियों, नियोक्ताओं, व्यावसायिक रूप से सक्षम शिक्षकों तथा वित्त व्यवस्था करने वाले निकायों के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करना।

लोगों की सहभागिता शैक्षिक संस्थाओं तथा समुदाय के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने, शिक्षा की उपयोगिता तथा कोटि में सुधार करने, अनुपस्थिति एवं कर्तव्यविहीनता को कम करने, समुदाय संसाधनों तक अधिक पहुँच तथा शैक्षिक संस्थाओं के प्रबन्ध को बेहतर ढंग से अनुशासित करने की ओर ले जायेगी। साथ ही इससे शैक्षिक संस्थाओं में स्थानीय राजनीति तथा सत्ता के दखल को भी दूर रखा जा सकेगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार प्रारम्भिक शिक्षा के प्रबन्ध में निम्नलिखित पर बल प्रदान किया जायेगा–

(1) जिला शिक्षा बोर्डों, जिला शिक्षा तथा प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना।

(2) प्रबन्ध का विकेन्द्रीकरण।

(3) स्वायत्तता की व्यवस्था।

(4) संस्थाओं, पद्धतियों तथा शिक्षकों का दायित्व निश्चित करना।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं कार्ययोजना 1992 में सभी स्तरों पर शिक्षा की आयोजना तथा प्रबन्ध के विकेन्द्रीकरण और इस प्रक्रिया में जनसहभागिता के महत्त्व पर बल प्रदान किया गया है। विकेन्द्रीकरण का अभिप्राय है– जिला, उपजिला तथा पंचायत स्तरों पर निर्णय लेने में लोगों के चुने हुए प्रतिनिधियों की लोकतांत्रिक सहभागिता।

पंचायती राज सम्बन्धी 1991 के संविधान संशोधन विधेयक में जिला, उपजिला और पंचायत स्तरों पर लोकतांत्रिक विधि से चुने गये निकाय स्थापित करने की परिकल्पना की गयी। संविधान की 11वीं अनुसूची में अन्य बातों के साथ–साथ पंचायती राज निकायों को अधोलिखित दायित्व सौंपने का प्रावधान है–

Downloaded From www.dietmathura.org

प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूलों सहित शिक्षा तकनीकि प्रशिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, गैर–औपचारिक शिक्षा, पुस्तकालय तथा सांस्कृतिक क्रियाकलाप।

जिला स्तर के निकाय

इस विधान के अन्तर्गत एक ऐसा जिला स्तर का निकाय गठित किया जाए जो अनौपचारिक तथा प्रौढ़ शिक्षा और उच्चतर माध्यमिक स्तर तक स्कूली शिक्षा सहित सभी शैक्षिक कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार हो। इस निकाय में निम्नलिखित को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो– (1) शिक्षाविदों (2) महिलाओं (3) युवकों के प्रतिनिधि (4) अभिभावकों के प्रतिनिधि (5) अनुसूचित जातियों/जनजातियों के प्रतिनिधि।(6) अल्पसंख्यकों (7) जिले की उपयुक्त संस्थाओं के प्रतिनिधि।

इस निकाय में शहरी क्षेत्रों तथा छावनियों में कार्य कर रही लोकतांत्रिक संस्थाओं (नगर परिषद् तथा छावनी बोर्डों) के प्रतिनिधि होने चाहिए। उक्त जिला निकाय को आयोजन तथा प्रबन्ध की जिम्मेदारी सौंपी जाये। यह निकाय जिला स्तर पर विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का प्रशिक्षण तथा निरीक्षण करेगा।

'जिला निकाय' जिला स्तर पर प्रारम्भिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा के सभी कार्यक्रमों में पर्याप्त पाठ्यचर्या एवं शैक्षिक निवेशों के लिए जिला शिक्षा तथा प्रशिक्षण संस्थान तथा अन्य संस्थाओं की विशेषज्ञता प्राप्त करेगा।

प्रारम्भिक शिक्षा में राज्य सरकारों की भूमिका

राष्ट्रीय शिक्षा नीति कार्ययोजना, 1986 के अनुसार राज्य सरकारें मानव संसाधन विकास से सम्बन्धित सभी कार्यकलापों के समेकन के लिए एक कार्य ढाँचा तैयार करने के सम्बन्ध में विचार करेंगी। यह समेकन राज्य शिक्षा सलाहकार बोर्ड के माध्यम से किया जायेगा। राज्य सरकारें केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की रूपरेखा के अनुसार इस बोर्ड की स्थापना करेंगी। इसमें सुविख्यात शिक्षाविदों तथा विशेषज्ञों के अलावा संस्थागत तथा संगठनात्मक प्रतिनिधि होंगे। इसमें समाज के कमजोर वर्ग– विशेषरूप से महिलाएँ, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति तथा अल्पसंख्यकों को भी प्रतिनिधित्व प्रदान किया जायेगा। यह बोर्ड सभी मानव संसाधन विकास कार्यक्रमों को समन्वित करने वाले एक प्रमुख निकाय के रूप में कार्य करेगा।

प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा को उन्नत बनाने के लिये केन्द्रीय सरकार ने राज्यीय शिक्षा संस्थान स्थापित करने की योजना प्रस्तावित की। केन्द्र सरकार ने इस योजना को 1963–64 में प्रस्तावित किया था। प्रायः सभी राज्यों तथा संघशासित प्रदेशों में इस योजना के अनुसार राज्य शिक्षा संस्थान स्थापित हो चुके हैं। विद्यालय शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों एवं इसके अतिरिक्त विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों से सम्बद्ध उपर्युक्त रैंक के जिला स्तर के अधिकारी व प्रमुख शिक्षा अधिकारी, शिक्षा निकाय का मुख्य शिक्षा अधिकारी होगा।

Downloaded From www.dietmathura.org

ग्राम शिक्षा समिति

संविधान संशोधन विधेयक के अन्तर्गत किसी ग्राम या ग्रामों के समूह के लिए पंचायतें बनाई जायेंगी। इस पंचायत में चुने हुए प्रतिनिधि होंगे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक पंचायत एक ग्राम शिक्षा समिति गठित कर सकती है जो ग्राम स्तर पर शिक्षा के क्षेत्र में निर्धारित कार्यक्रमों के प्रशासन के लिए जिम्मेदार होगी। इन ग्राम शिक्षा समितियों का मुख्य उत्तरदायित्व व्यवस्थित रूप से घर–घर सर्वेक्षण करके और अभिभावकों के साथ समय–समय पर विचार–विमर्श करके गाँव में सूक्ष्म स्तर की योजना तैयार करना है एवं विद्यालय मानचित्रण भी करना है। कार्ययोजना 1992 के अनुसार राज्य सरकारें ग्राम शिक्षा समिति को निम्नलिखित कार्य सौपने पर विचार करें–

- ग्राम समुदाय के बीच जागरूकता बढ़ाना तथा उसे पोषित करना, जिसके साथ यह सुनिश्त किया जा सके कि इसमें सभी वर्गों के लोग सम्मिलित होंगे।
- स्कूलों और केन्द्रों के कारगर तथा नियमित कार्यों का निरीक्षण एवं प्रबन्धन करने के लिए शिक्षक अनुदेश तथा समुदाय की सहभागिता को बढ़ावा देना।

विभिन्न राज्यों में ग्राम शिक्षा समितियों की स्थापना की जा चुकी है। ये समितियाँ समुदाय तथा प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली के बीच मिलन बिन्दु की (Inerface) भूमिका निभाती हैं। ये समितियाँ मुख्यतः निम्नलिखित कार्य करती हैं–

- समुदाय को गतिशील बनाना।
- अभिभावकों को प्रेरित करना कि वे अपने बच्चों को नियमित विद्यालय भेंजे।
- प्रारम्भिक बाल देख–भाल तथा शिक्षा के प्रबन्धन में सहायता प्रदान करना।
- वैकल्पिक केन्द्रों को स्थापित करना।
- 'ग्राम निर्माण समिति' बनाना जो विद्यालय भवन तथा कक्षा–कक्षों के निर्माण तथा उसके निरीक्षण करने का कार्य करें। यह समिति 'ग्राम शिक्षा समिति' की देख–रेख में श्रमिकों, निर्माण सामग्री आदि की व्यवस्था करती है। इसके साथ ही निर्माण कार्य का निरीक्षण भी करती है।
- विद्यालय के लिए दान प्राप्त करना।
- ग्राम के शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करना।
- घर–घर सर्वेक्षण के माध्यम से सूक्ष्म आयोजन तैयार करना।
- नामांकन धारण तथा शाला त्याग की दर में कमी लाने के लिए कार्य करना।
- शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए विद्यालय की सुविधाओं को उन्नत बनाना।

प्रारम्भिक शिक्षा में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, कार्य योजना 1986 के अनुसार अनौपचारिक शिक्षा, शिशु देखभाल, प्रौढ़ शिक्षा, विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा सहित प्रारम्भिक शिक्षा जैसे कार्यक्रमों के सफल

Downloaded From www.dietmathura.org

कार्यान्वयन के लिए सबसे निचले स्तरों पर शिक्षा के कार्यक्रमों में जनता की सहभागिता तथा सहयोग अपेक्षित है। इसी प्रकार स्वैच्छिक संगठनों तथा सक्रिय सामाजिक कार्यकर्त्ताओं का सहयोग भी व्यापक रूप से अपेक्षित है। सरकार और स्वैच्छिक एजेंसियों के बीच वास्तविक भागीदारी के सम्बन्ध सुनिश्चित करने की आवश्यकता को समझते हुए सरकार उनका व्यापक सहयोग प्राप्त करने हेतु ठोस कदम उठायेगी। इसके साथ ही समय–समय पर उनसे आवश्यकतानुसार परामर्श भी प्राप्त किया जायेगा। कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सहभागिता करने के लिए उन्हें अपेक्षित सुविधाएँ दी जायेंगी। 1990 से 1993 तक 25 राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में गैर सरकारी संगठनों द्वारा 9485 से अधिक अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र संचालित किये जा रहे थे। गैर सरकारी संगठन प्रारम्भिक शिक्षा कार्यक्रमों के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। निजी स्कूलों ने अपने प्रयासों से विद्यार्थियों की एक अच्छी संख्या को आकृष्ट कर रखा है।

सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के सफल संचालन से साक्षरता की स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है। आज आवश्यकता इस बात की भी है कि हमें स्वयं व्यक्तिगत स्तर पर जागरुक होना होगा एवं अपने कर्त्तव्यों का ईमानदारी पूर्वक निर्वाह करना होगा। तभी शिक्षा का समुचित रूप में विकास हो सकेगा एवं सरकार के प्रयासों का वास्तविक प्रतिरूप दिखाई देगा। सरकार ने शिक्षा के विकास के लिए जो मानक तय किये हैं हमें उन पर खरा उतरना होगा तभी शिक्षा समुचित रूप में जन–जन तक पहुँच पायेगी। प्रबुद्ध जनों ने देश के विकास के लिए जो स्वप्न देखें हैं वे तभी साकार हो पायेंगे।

बाल-अधिगम में निर्देशन एवं परामर्श का महत्व

बच्चे क्या पढ़ें अथवा बालकों के लिए उनकी क्षमता, प्रवृत्ति, संसाधन को दृष्टिगत रखते हुए क्या अधिगम करें– यह सुझाना बाल अधिगम कहलाता है। किसी समस्या या क्रिया का अधिगम तब किया जा सकता है जब उस समस्या के सम्बन्ध में जागरूक हो। किसी समस्या के अधिगम के लिए यह आवश्यक है कि अधिगमकर्ता के स्नायु इतने विकसित और परिपक्व हों कि वह समस्या का अधिगम कर सके। बाल शिक्षुओं के स्नायु और मस्तिष्क इतने परिपक्व नहीं होते हैं कि किसी समस्या का सरल विधि द्वारा अधिगम कर सकें। बाल शिशुओं में जागरूकता नहीं के बराबर पायी जाती है। कुछ अध्ययनों के द्वारा यह स्पष्ट हुआ है कि यद्यपि बाल अधिगम बहुत कठिन है, परन्तु फिर भी सहज एवं सरल परिस्थितियों में बाल शिशुओं को अधिगम कराया जा सकता है।

शिक्षा के उपक्रम का उद्देश्य बच्चों को अधिगम कराना (सिखाना) है। सिखाने की इस प्रक्रिया को शिक्षण, अनुदेशन, निदेशन, परामर्श आदि क्रिया–कलापों से पूरा किया जाता है। बालकों को पर्याप्त व शीघ्र अधिगम करने के लिए बच्चों को दिया जाने वाला अनुदेशन **निदेशन व परामर्श** कहलाता है।

निदेशन एवं परामर्श का महत्व

शैक्षिक (अधिगम) के महत्व को बताते हुए विभिन्न विद्वानों ने अपना मत अग्र प्रकार प्रकट किया है–

Downloaded From www.dietmathura.org

ब्रेबर के अनुसार– ''शैक्षिक निदेशन चेतनामिभूत प्रयत्न है, जिनके द्वारा व्यक्ति के बौद्धिक विकास में सहायता प्रदान की जाती है। कोई भी चीज जो शिक्षण या सीखने के साथ की जाती है। शैक्षिक निदेशन के अन्तर्गत आती है।''

रूथ स्टेग के अनुसार– ''व्यक्ति को शैक्षिक निदेशन प्रदान करने का उद्देश्य छात्र को उपयोगी कार्यक्रम को चुनने तथा उसमें प्रगति करने में सहायता देना है।''

बाल अधिगम में परामर्श– निर्देशन का क्षेत्र तथा आवश्यकता

बालक–बालिकाओं को उचित मार्गदर्शन, परामर्श करना ही महत्वपूर्ण आवश्यकता है। शैक्षिक निर्देशन एवं परामर्श निम्नलिखित दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं अधिगम हेतु पाठ्य विषयों का चयन में–

- भावी शिक्षा कार्यक्रम के चयन में।
- विद्यालय में समत्योजन करने हेतु।
- अधिगम प्रक्रिया में वांछित प्रगति करने हेतु।
- रोजगार के अवसर हेतु शिक्षण करने हेतु।
- अपव्यय व अवरोधन को रोकने हेतु।
- अधिगम में निर्मित 'सीखने का पठार' के न बनने देने तथा यदि बन गया है तो उसे समाप्त करने हेतु परामर्श तथा निदेशन किया जाता है।
- अधिगम को स्थाई व व्यावहारिक स्वरूप (बोध स्तर) प्रदान करने हेतु।
- अधिगम करने की विधियाँ अपनाने हेतु परामर्श दिया जाता है।
- अधिगम में मन न लगने पर परामर्श व निदेशन की व्यवस्था की जाती है।

बाल अधिगम में परामर्श के पात्र

बाल अधिगम में कई तत्व काम करते हैं जैसे–बालक स्वयं, शिक्षक, पाठ्यक्रम वातावरण व अभिभावक या पारिवारिक आर्थिक स्थिति। बाल अधिगम को श्रेष्ठ, स्थायी बनाने के लिए इसमें निम्नलिखित को भी परामर्श दिया जाता है–

- शिक्षकों को
- अभिभावकों को
- बच्चों को

बाल अधिगम को स्थाई बनाने हेतु उपर्युक्त लोगों को भी परामर्श दिया जाता है ताकि वे बाल अधिगम में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन कर सकें। निदेशन व परामर्श बाल अधिगम को स्थायी, सुगम बनाता है।

Downloaded From www.dietmathura.org

अभ्यास-प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. ''निर्देशन युवक को सहायता देने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा वह स्वयं के साथ, दूसरों के साथ और परिस्थियों के साथ समायोजन करना सीखता है।'' यह परिभाषा है–

(क) जोन्स की (ख) स्किनर की

(ग) राबिन्सन की (घ) सीताराम जायसवाल की

2. ''परामर्श का उद्‌देश्य आत्म परिचय या आत्मबोध है।'' यह कथन है–

(क) रूथस्ट्रेंग का (ख) रोलोम का

(ग) इन्समूर का (घ) जोन्स का

3. मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 में स्थित है–

(क) लखनऊ (ख) बनारस

(ग) इलाहाबाद (घ) कानपुर

4. जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान सम्बन्धित है–

(क) बेसिक शिक्षा (ख) माध्यमिक शिक्षा

(ग) उच्च शिक्षा (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

5. सामान्यतः विद्यालय परामर्श सेवा संगठन के कितने प्रारूप माने जाते हैं–

(क) दो (ख) तीन

(ग) चार (घ) पाँच

6. बड़े आकार के विद्यालयों में किस प्रकार की संगठन पद्धति की आवश्यकता होती है–

(क) रेखा संगठन (ख) कर्मचारी संगठन

(ग) रेखा कर्मचारी मिश्रित संगठन (घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. परामर्श की कौन–कौन सी विधियाँ हैं।

2. स्वास्थ्य निर्देशन क्या है।

3. मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 की स्थापना की संस्तुति किसने की ?

4. टी0 ए0 टी0 से क्या तात्पर्य है?

लघुउत्तरीय– प्रश्न

1. निर्देशन का अर्थ स्पष्ट करो।

Downloaded From www.dietmathura.org

2. निर्देशन के कोई दो उद्देश्य लिखो।

3. परामर्श की कोई दो परिभाषा लिखो।

4. मण्डलीय स्तर पर मनोविज्ञानशाला उ0प्र0 कौन–कौन से कार्य करती है?

5. जिला चिकित्सालय निर्देशन एवं परामर्श के क्षेत्र में किस प्रकार कार्य करता है ?

दीर्ध–उत्तरीय प्रश्न

1. निर्देशन की आवश्यकता को वर्तमान के सन्दर्भ में स्पष्ट कीजिए।

2. मनोविज्ञानशाला के कार्यों की विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- भार्गव, महेश – विशिष्ट बच्चे
- शर्मा, आर0ए0 – विशिष्ट शिक्षा का प्रारूप
- सिरिल, बर्ट – एक्सेप्सनल चिल्ड्रेंन
- शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्धन – जे0सी0 अग्रवाल
- विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे की शिक्षा तथा निदेशन एवं परामर्श–डॉ0 विनय ऋषिश्वर
- भारत में प्राथमिक शिक्षा – जे0सी0 अग्रवाल

Downloaded From www.dietmathura.org